प्रथम अध्याय

श्री अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रथम अध्याय

अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना :

१.१ नागरों का मूल

१.२ जीवन परिचय

(१.) जन्म

(२.) माता-पिता

(३.) शिक्षा-दीक्षा और परिवार

(४.) जीवन-संघर्ष

१.३ अभिरुचि एवं व्यक्तित्व-विश्लेषण

१.४ साहित्य-सृजन के प्रेरणा-स्रोत

१.५ साहित्य-रचना के विविध आयाम

(१.) उपन्यास-साहित्य

(२.) कहानी-साहित्य

(३.) बालसाहित्य

(४.) नाट्य-साहित्य

(५.) संस्मरण-साहित्य

(६.) जीवनी

(७.) आत्मकथा

(८.) हास्य-व्यंग्य कृतियाँ

(९.) अनुदित साहित्य

(१०.) पत्र-पत्रिकाएँ

१.६ फिल्मी दुनिया से संबंध

१.७ शौक एवं अन्य रुचियाँ

१.८ पुरस्कार एवं सम्मान

१.९ स्वर्गवास

१.१० आधार ग्रन्थ

१.११ सन्दर्भ

प्रथम अध्याय

अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

प्रस्तावना :

मानव-सभ्यता का विकास मनुष्य-मात्र के भिन्न-भिन्न पहलुओं, अनेक आयामों और परिवेशों के आधार पर हुआ है। मनुष्य के व्यक्तित्व की विभिन्न इकाइयाँ पैतृक, परिवारिक, नैतिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक और देश-कालानुसार युगीन परिस्थितियों आदि को समग्रता में प्रकट करती है। ऐसे मानव-जीवन की सही पहचान उसके पौरुष और उसकी बुद्धिमत्ता है। इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो "जीवन संग्राम के जीवंत योद्धा, उदार, अलमस्त-मानव, रूढ़िमुक्त-आस्तिक, बहुविध घुमक्कड़, बहुश्रुत-बहुपठित, बहुभाषा-विज्ञ, पारखी, पूर्वग्रहमुक्त, जागरूक, इतिहास-पुराणप्रेमी, प्रगतिशील-विचारक, क्षेत्रीय-शोधकर्ता, योग्य-अनुवादक, सुधी संपादक, प्रवीण हास्य-व्यंग्यकार, कुशल अभिनेता, सफल रंगमंच-निर्देशक, सिद्धहस्त सिनेरियो-लेखक, अपूर्व-शैलीकार तथ बालसाहित्य-प्रणेता और असंख्य लेखों, संस्मरणों, रेडियो-नाटकों के लेखक-निर्देशक एवं कहानियों के रचयिता आदि सबको मिलाकर जो व्यक्तित्व बनता है, उसका नाम है- अमृतलाल नागर।"[1]

१.१ नागरों का मूल :

महाभारत में वर्णित हाटक प्रदेश लद्दाख से मानसरोवर तक फैला था, जिसे अर्जुन ने साम नीति से जीता था। जातक उन ब्राह्मणों का राज्य था, जो आर्य होकर भी अज्ञवादी ब्राह्मण संघ से कई अर्थों में भिन्न थे। ईरानी 'आर्य नेम बैंजो' अर्थात आर्यवर्त के एक बहुत बड़े भूखंड में प्रलय काल समाप्त होने के बाद आर्यों के आदि मार्ग से अपने ब्राह्मणों और शूरवीरों के नेतृत्व में वे लद्दाख और कश्मीर आए थे। यहाँ गुहकों का अराजक राजी था और शायद यही विघटित होकर नगर कोट गुजरात और वर्तमान उत्तर प्रदेश तक फैला है। भागवत में वर्णित दो पातालों की खोज भी की गई है जो हाटकेश्वर भगवान और शरीर में अद्भुत शक्ति करने वाले हटकी रस समृद्ध थे। शायद ये दो पाताल 'अल्टाई पर्वत' के आस-पास रहे होंगे। महापंडित राहुल सांकृत्यायन के प्रमाण से मध्य एशिया में पाई जाने वाली सोने की पहली खान यहीं है। नाग आर्यों का टोटेम है। पुराणों में नागों को पूज्य कहा गया है, उनके दर्शन को शुभ माना गया है। नाग अनार्य नहीं थे। अवतारवाद की स्थापना होने पर राम और कृष्ण कथा के नायक और

उपनायक क्रमशः विष्णु और शेषनाग ही प्रतिष्ठित किए गए। पुनः अवतारी क्षेत्र से हटकर नगरों ने जब लद्दाख और कश्मीर पर हक जमाया तभी नई सांस्कृतिक व्यवस्था का आरंभ हुआ। आजा भी काश्मीर की झीलें नाग कहलाती है। ब्राह्मणों में नागर लोगों की अलग विशेषता है, उनके कुल देवता का नाम है 'हाटकेश्वर'। गुजरात में अहमदाबाद आबू के मार्ग पर स्थित 'वाडनगर' इनका मूल धाम है। 'हाटक' स्वर्ण को कहते है। स्वर्ण लिंग रूप में स्थापित इष्टादेवकी क्षेत्र शुक्र १४ को 'वाडनगर' में स्थापना की गई है। सर्वत्र नागर बंधु प्रतिवर्ष उस दिन इस लिंग का पाटोत्सव मनाते हैं। उस समय का प्रार्थना गीत इस प्रकार आज भी गाया जाता है।

"वंदे श्री गिरिजायुत गिरिशयं वंदे गुरुणाम गुरुम।

वंदे विश्वपतीं प्रभु पशुपति वंदे जगत पृजितम।।

वंदे भूपति परात्पर पति वंदे जगत पृजितम।

वंदे नागरं वंश पूजिट पद्म श्री हाटकेश शिवम्।।"

इस प्रकार किसी भी जाति-वंश के बारे में संपूर्ण रूप से जानकारी हासिल करना हो तो पुराण, इतिहास पर थोड़ा-बहुत भरोसा करना जरूरी है। इन सबको देखने से पता चलता है की पंडित अमृतलाल नागर के पूर्वजों ने सरनाम 'जानी' नागर यों ही नहीं रख लिया गया होगा।

१.२ जीवन परिचय :

साहित्यकार अपनी कृति में अपने आपको भी अभिव्यक्त करता है। उसका समग्र-लेखन उसके जीवन को स्पष्ट करता है। जीवन, व्यक्तित्व और जीवन-दर्शन तीनों का साहित्य-सृजन में महत्वपूर्ण योग रहता है। इसलिए साहित्य के वस्तुगत-अध्ययन और मूल्यांकन के लिए साहित्य के संबंध में जानकारी रखना आवश्यक है। अमृतलाल नागर बहुमुखी प्रतिभा के समर्थ रचनाकार है। उपन्यास-सम्राट प्रेमचन्द के द्वारा प्रवर्तित प्रगति-लेखन और उपन्यास-परंपरा को विकसित एवं उन्नत करने वाले साहित्यकारों में उनका नाम भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। नागरजी ने आधुनिक-कथासाहित्य को अपनी महत्वपूर्ण कृतियों से समृद्ध किया है। उन्होंने अपने व्यक्तित्व की विलक्षण छाप भी हिंदी कथा-साहित्य पर अंकित की है।

(१.) जन्म :

हिन्दी साहित्य तथा अन्यान्य विषयों के अध्येता, हिंदी उपन्यास के गौरव और भारतीय संस्कृति के सच्चे उपासक अमृतलाल नागर का जन्म उत्तर प्रदेश के आगरा जिले के गोकुलपुरा मुहल्ले में भाद्र कृष्ण ४, संवत् १९७६ गुरुवार, तदनुसार १७ अगस्त, १९१६ ई. को हुआ था। वहाँ उनका ननिहाल था। उस समय उनके पिता व पितामह लखनऊ में रहते थे। नागरजी के अनुसार - "फारुखसियर के जमाने में नागरों के अष्टकुल गुजरात से यहाँ आकर बसे थे।"[2]

"उनके पूर्वजों का मूल निवास गुजरात में था। लगभग ढाई सौ साल पहले उनके कोई पूर्व पुरुष प्रयाग में आकर बसे।....अमृतलाल नागर के पितामह पंडित शिवाराम नागर, खतौली (मुजफ्फर नगर) और आगरा में रह चुके थे, बाद में इलाहाबाद में आकर बसें।"[3] अमृतलाल नागर के पूर्वजों का उत्तर प्रदेश में रहने-बसने का प्रामाणिक विवरण उनके पुत्र शरद नागर ने अपनी पुस्तक 'मैं और मेरा मन' में इस प्रकार दिया है- "१८५७ का गदर गुजरे ७ साल पूरे हो चुके थे....इसी दौर में १८६८ के लगभग इलाहाबाद में दौलतरामजी (नागरजी के प्रपितामह) के घर में शिवरामजी का जन्म हुआ। (ये शिवराम जानी के नाम से भी प्रसिद्ध रहें हैं) शिवराम जानी १९वीं शताब्दी के अंतिम दशक में इलाहाबाद बैंक के मुलाजिम होकर, इलाहाबाद से तबादला होने पर लखनऊ आए और यहीं बस गए।....२३ अक्तूबर १८९६ को उनके पुत्र राजाराम नागर का जन्म यहीं (लखनऊ) में हुआ। इनके बड़े पुत्र अमृतलाल नागर का जन्म, ननिहाल आगरा में हुआ था जो डेढ़ माह बाद लखनऊ आ गए।"[4] शिवराम जानी की शिक्षा मैट्रिक तक हुई और उसके बाद उन्हें अवध रुहेलखंड में क्लर्क की नौकरी झाँसी स्टेशन के लिए मिल गई। यहाँ से शिवराम नागर इलाहाबाद बैंक में कैसे आए इसका किस्सा भी बहुत रोचक है। शरद नागर के अनुसार- "एक दिन स्टेशन पर ड्यूटी करते समय एक अंग्रेज उनके निकट आया और कुछ जानकारी प्राप्त करने के लिए अंग्रेजी में कुछ सवाल पूछे, जिनका उत्तर नवयुवक शिवराम ने तत्परता से बाअदब अंग्रेजी में ही दिया। वह अंग्रेज बहुत खुश हुआ, उसने कुछ लिखित सूचना माँगी, जो निहायत खुशखत में शिवरामजी ने अंग्रेजी में लिखकर दी। वह अंग्रेज हस्तलिपि देखकर बहुत प्रभावित हुआ। उस अंग्रेज ने बताया कि वह इलाहाबाद बैंक की कलकत्ता ब्रांच का बड़ा अधिकारी है, उसे बैंक के लिए अंग्रेजी पढ़े लिखे, योग्य और भले लड़को की तलाश है। उसने पूछा कि रेलवे में कितनी तनख्वाह पाते हो? शिवरामजी ने बताया कि वे १० रुपए के लगभग पाते हैं। अंग्रेज ने कहा की वे उन्हें इलाहाबाद बैंक के इलाहाबाद दफ्तर में

नौकरी पर रख सकते हैं जहाँ उन्हें रेलवे की नौकरी से ५ रुपए अधिक वेतन मिलेगा। शिवराम बहुत खुश हुए, फौरन अर्जी लिखकर दी और जल्द ही उनकी नियुक्ति बैंक में हो गई।

शिवराम हिसाब-किताब के काम में बहुत होशियार थे, उनका तबादला लखनऊ में इलाहाबाद बैंक के मुख्यालय हजरतगंज में हो गया और....१९०२ में जब इलाहाबाद बैंक की लखनऊ सिटी ब्रांच चौक में स्थापित हुई तब वे इस ब्रांच के सब एजेंट के पद पर नियुक्त किए गए। १९२४ के लगभग वे इलाहाबाद बैंक की चौक स्थिति सिटी ब्रांच से रिटायर हुए। १९२८ में लगभग ६० वर्ष की अवस्था में उनका देहांत हुआ।....शिवरामजी को चौक ब्रांच के अधिकारी हो जाने पर बैंक के भवन में ही एक तिमंजिला भाग रहने के लिए मिल गया था। बैंक के सिटी ब्रांच के अधिकारी होने के नाते उनका सामाजिक दायरा बड़ा था।.....वे लगभग ४० साल बैंक की सेवा में रहने के बावजूद अपना निजी मकान न खरीद सके और न बनवा सके। बैंक से रिटायर होने के बाद वे चौक में ही बहोरन टोली, चूड़ी वाली गली तथा भैसोंवाली वाली गली आदि में, किराए के मकानों में रहे। शिवरामजी ने हमेशा किफायत सारी और 'सादा जीवन उच्च विचार' के मंत्र के साथ जीवन यापन किया।"[5]

(२.) माता-पिता :

नागरजी के पिता का नाम पं० राजाराम तथा माता का नाम विद्यावती लेखकीय अभिलेखों के आधार पर ज्ञात होता है। इनके दादा-दादी ने अपने तेरह-चौदह बच्चे खोकर दो संताने पायी थी, एक पुत्री और एक पुत्र के रूप में। पुत्री अर्थात नागरजी की बुआ, जिनका विवाह अल्पायु में ही हो गया था। फलतः पुत्र यानी नागरजी के पिता जी, माता-पिता के आँखों का तारा बन गए। अमृतलाल नागर के पिता पंडित राजाराम नागर की शिक्षा चौक स्थिति खत्री पाठशाला तथा कालीचरण हाईस्कूल में हुई थी, उनकी असहजताओं के बारे में नागरजी के पुत्र शरद नागर ने बहुत सटीक बातें लिखी है- "१९०८ में बड़ी बहन मोघी का विवाह मुरादाबाद निवासी मुरलीधर पंड्या से हो जाने के उपरांत और अपने माता पिता के एक मात्र पुत्र होने के कारण उनके 'नूर-ए-नजर' हो गए। उनकी कामना थी, वे मैट्रिक पास करके डॉक्टर बनें। परन्तु कलकत्ता में परीक्षा हेतु भेजने के लिए माता-पिता तैयार नहीं थे। अतः मैट्रिक पास करने के पहले ही बेटे के पैरों में उन्होंने विवाह की बेड़ियाँ डाल दी। जनवरी १९१२ में आगरा स्थिति गोकुलपुरा के निवासी जमींदार शंकरलाल दवे की पौत्री विद्यावती से उनका विवाह हो गया और

राजाराम गृहस्थी के मकड़जाल में फंस गए।"[6]

माता-पिता के अतिरिक्त मोह ने ही जैसे उनकी प्रगति रोक दी। डॉ. बनने के इच्छुक बेटे को इंटर के बाद पोस्टल विभाग में क्लर्क बनना पड़ा। इससे पंडित राजाराम के व्यक्तित्व में कुछ असहजताओं का जन्म हुआ। इस स्थिति का वर्णन करते हुए नागरजी कहते है- "क्लर्क बने सो बने, हाँ, उनका क्रोध बढ़ गया। घर में ही माँ-बाप पर क्रोध नहीं कर सकते थे, लेकिन नौकरों पर, मेरी माँ या मुझ पर जोर से क्रोधित होकर घर भर को थर्रा देते थे।"[7]

परन्तु उनके पिता ने आत्महत्या क्यों कर ली, इस संबंध में श्रीलाल शुक्ल ने लिखा है- "राजाराम....अपने पिता की १४-१५ संतानों में अकेले पुत्र बचे थे। इसलिए उनको माता-पिता की ओर से आसामान्य प्यार मिलता था।....पिता चाहते थे कि उनके पुत्र घर छोड़कर कहीं न जाएँ। फलतः राजाराम की कलकत्ता जाकर डॉक्टरी पढ़ने की इच्छा पूरी नहीं हुई। बाध्य होकर उन्हें लखनऊ में ही पोस्ट मास्टर जनरल के ऑफिस में सामान्य-सी नौकरी करनी पड़ी। इन परिस्थितियों में राजाराम नागर के व्यक्तित्व में कुछ असहजताएँ पनपी, उसका परिणाम हुआ ९, फरवरी १९३५ को उन्होंने आत्महत्या कर ली।"[8]

अमृतलाल नागर ने अपने संस्मरणों में अपने पिता के अनेक गुणों का स्मरण करते हुए उन्हें अत्यंत प्रभावशाली माना हैं। वे अत्यंत लोकप्रिय, मृदुभाषी, हँसमुख, हाजिरजवाब और बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। नागर जी के पिता के गांधीवादी विचारों, नैतिक संस्कारों एवं उच्चादर्शों का उनके व्यक्तित्व परिष्कार में अमित योगदान रहा है। राजाराम नागर नाटकों में अभिनय व निर्देशन करने में भी प्रवीण थे।

(३.) शिक्षा-दीक्षा और परिवार :

अमृतलाल नागर की प्रारम्भिक शिक्षा-दीक्षा घरेलू व्यवस्था में हुई क्योंकि; उनके पितामह उन्हें कच्ची उम्र में बाहरी सड़कों वाले समाज से सुरक्षित रखना चाहते थे। अमृतलाल नागरजी की उम्र जब ५ वर्ष (और पत्नी की ३ वर्ष) थी, तभी उनकी सगाई हो गई थी। वह जब कालीचरण हाईस्कूल में दाखिल हुए, तब भी सातवीं दर्जे तक नौकर उन्हें स्कूल पहुँचाने जाता था। फिर भी मेल-मिलाप और सामाजिक चर्चा में नागरजी की प्रबल रुचि थी और वह कुंठित नहीं हो पाई। उनके पिता की प्रबल इच्छा थी की अमृतलाल नागर पढ़-लिखकर डॉक्टर या

इंजीनियर बनें। इसलिए हाईस्कूल तक वे नागरजी को साहित्यिक पुस्तकें और पत्रिकाएँ पढ़ने से हतोत्साहित करते रहे। वे चाहते थे कि उनका पुत्र विज्ञान और गणित में ध्यान लगाए। अतः नागरजी को साहित्यिक पढ़ाई चोरी-चोरी करनी पड़ती थी। दूसरी बार हाईस्कूल पास करके वे इंटरमीडिएट की पढ़ाई के लिए १९३४ में क्रिश्चियन कॉलेज, लखनऊ में दाखिल हुए। पर नागरजी का मन इन सबमें रमता ही नहीं था। हाँ, कॉलेज के पुस्तकालय में प्रायः वे साहित्यिक पुस्तके पढ़ते रहते थे।

अमृतलाल नागर का विवाह प्रतिभा नागर से ३१ जनवरी, १९३१ ई. को आगरा में हुआ।

सहसा एक दिन अमृतलाल नागर के पिता ने आत्महत्या कर ली। अतः पुत्र अमृत की पढ़ाई छूट गयी। ये आकस्मिक हा, हंत! अमृतलाल के लिए अप्रत्याशित था। परन्तु कितना विचित्र है कि इन्हीं अमृतलाल का जब जन्म हुआ था, तब लोगों ने पंडित राजाराम नागर को बधाई देते हुए कहा था- "देखो, बेटा कितना भाग्यशाली है कि पहली वर्षगांठ पर ही अपने पिता को सरकारी नौकरी दिलवा दी....इस पर राजारामजी कतई खुश नहीं हुए। उनका उत्तर था कि सवा लाख की कोठी में रोजाना आठ घण्टे की जेल काटनी है.....सरकारी नौकरी में आने के बाद ही उनका मन कुछ बूझने लगा था।"[9]

बहरहाल, अब युवक अमृतलाल नागर की पढ़ाई छूट गई थी और पिता का सबसे बड़ा पुत्र होने के नाते अब पूरे परिवार को चलाना और सँभालना उनकी जिम्मेदारी थी। डॉ. बिंदु अग्रवाल के अनुसार- "इनका गृहस्थ जीवन अत्यंत सुखी था। उन्हें घर के काम में पत्नी का हाथ बंटाने जैसे गेंहूँ बीनने में कभी-कभी बड़ा आनंद आता था। ऐसा कार्य वही व्यक्ति कर सकता है, जिसका घर के कोने-कोने में स्नेह हो। नागरजी आपसी बातचीत, यहाँ तक कि सार्वजनिक सभा में भी यह कहते नहीं हिचकते थे कि वह जो कुछ हैं, उसमें बारह आने उनकी पत्नी प्रतिभा हैं और चार आने भर स्वयं वे है। मैं नहीं जानती कि अभी तक इतना अधिक श्रेय किसी लेखक ने अपनी पत्नी को दिया हो।"[10]

युवक अमृतलाल नागर ने पिता की मृत्यु के बाद कड़े संघर्ष के बीच खुद समेत अपने पिता के दो पुत्रों (छोटे भाई रतनलाल और मदनलाल) की शिक्षा-दीक्षा को आगे बढ़ाने के साथ पंडित राजाराम की सामाजिक प्रतिष्ठा में चार चाँद लगाए। तीनों भाइयों में ज्येष्ठ श्री अमृतलाल नागर गाँधीवादी मान्यताओं के प्रति समर्पित मानवतावादी विचारक और हिंदी के लब्ध प्रतिष्ठित

कथाकार हुए और मझले भाई श्री रतनलाल नागर डायरेक्टर के रूप में फिल्म जगत से संबद्ध रहे। दुर्भाग्यवश १९६६ ई. में उनकी मृत्यु हो गई। ललित कला अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कनिष्ठ भ्राता श्री मदनलाल जी एक विख्यात चित्रकार और लखनऊ विश्वविद्यालय में ललित कला के आचार्य एवं अध्यक्ष थे। डॉ. सुदेश बत्रा के अनुसार- "एक वाक्य में कह सकते है की नागर जी का परिवार कलाप्रेमियों का परिवार रहा है। उनके भाइयों की कलाप्रियता इसका प्रमाण है।"[11]

अपनी पत्नी का उल्लेख "खरी जीवन संगिनी" कहकर नागरजी ने उन्हें ७५ प्रतिशत अमृतलाल नागर बताते है। डॉ. कुसुम वार्ष्णेय को दिए गए इंटरव्यू में श्रीमती प्रतिभा नागर के शब्द नागरजी की बात को पूर्णतः सिद्ध करते हैं- "शुरू में इन्हें देखकर मुझे भी लिखने का शौक हुआ था, पर यह सोचकर मैंने छोड़ दिया कि मेरा लेखिका बनना उतना जरूरी नहीं, जितना इनके लेखन में मेरा सहयोग। धन-वैभव से मुझे कभी मोह नहीं रहा। मेरी तो हमेशा यही अभिलाषा रही कि ये अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के लेखक बनें। इसलिए अनेक बार आर्थिक संघर्ष को मैने सहर्ष झेला है।"[12]

प्रतिभा नागर कुशल गृहणी होने के साथ-साथ एक कर्मठ और सक्रिय कार्यकर्ती भी थी। वे घरेलू स्त्रियों के लिए कढ़ाई-सिलाई, संगीत-शिक्षा आदि का स्कूल चलाती रहीं। इस स्कूल में संगीत शिक्षा के लिए एक वैश्या को अध्यापिका पद पर नियुक्त करके, उस समय उन्होंने अपने अदम्य साहस का परिचय दिया। नागरजी की 'ये कोठेवालिया' पुस्तक के लिए वेश्याओं के इंटरव्यू में भी प्रतिभाजी ने सक्रिय सहयोग दिया। नागरजी का परिवार पूर्णतः सुसंस्कृत एवं संपन्न रहा है। स्पष्टतः नागरजी का सम्पूर्ण पारिवारिक वातावरण साहित्य और कला की प्रयोगशाला है, जिनमें इन कलाकारों की रंगविरंगी कलाकृतियाँ अपना सौंदर्य बिखेर रही हैं।

प्रतिभा जी और नागर जी की चार संताने हैं- दो पुत्र और दो पुत्रियाँ। उनके बड़े पुत्र कुमुद नागर आकाशवाणी के लखनऊ केंद्र में सहायक ड्रामा प्रोड्यूसर रहें हैं बाद में वह दूरदर्शन की सेवा में आ गए। दूसरे पुत्र श्री शरद नागर रसायन विज्ञान में एम.एस.सी. रहे। वह उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी में सांस्कृतिक अधिकारी, सहायक सचिव एवं कार्यकारी सचिव पद पर कार्य करते रहकर सेवानिवृत हुए। उनकी बड़ी पुत्री अचला नागर बी.एस.सी. विवाहिता रहीं तथा बहुत सारी फिल्मों की लेखिका हैं। छोटी पुत्री आरती भी लेखिका है। नागरजी की सभी

पुत्र-पुत्रियाँ साहित्य तथा अभिनय के शौकीन हैं। कुमुद नागर ने भी साहित्य-सृजन किया हैं। नागरजी जी के जीवन में तथा उनके निधन के बाद उनके अप्रकाशित साहित्य का प्रकाशन कराने में उनके छोटे पुत्र शरद नागर आजीवन उद्दमशील रहें है।

मोपासां और चेखव से अमृतलाल नागर का परिचय लेखक शुरूआती दिनों का है। श्री शरतचंद्र चट्टोपाध्याय का पूरा साहित्य अमृतलाल तब तक पढ़ चुके थे और उनसे मिल भी आए थे। इस अध्ययन ने उनकी बुद्धि का परिष्कर किया और उनका साहित्यिक विवेक विकसित हुआ। पिता की आकस्मिक मृत्यु के कारण नागरजी की शिक्षा का आगे समुचित नहीं बढ़ सक तथा परिवार में जेष्ठ पुत्र होने से उन्हें नौकरी के लिए विवश होना पड़ा। ज़िन्दगी की पहली नौकरी आल इंडिया यूनाइटेड इन्श्योरेन्स कम्पनी में क्लर्की की मिली और काम मिला डिस्पैचर का। परन्तु १८वें दिन ही किसी बात पर कुछ कहा-सुनी होने पर स्वाभिमानी युवक अमृतलाल नागर ने इस नौकरी को अलविदा कह दिया। नागरजी को युवावस्था में ही संघर्षों से जूझना पड़ा। उनको पढ़ाई छूट जाने पर खास अफसोस नहीं हुआ। डॉ. रामविलास शर्मा ने इस कृतिकार के लिए कहा है- "हाईस्कूल पास पंडित अमृतलाल नागर को जिंदगी के विश्वविद्यालय से सब डिग्रियाँ मिल चुकी हैं। अब न एक आंच की कसर है न दो की। वे खूब तप चुके है और हिंदी की सेवा करने के लिए पूर्ण योग्यता प्राप्त है।"[13]

(४.) जीवन संघर्ष :

श्री अमृतलाल नागर का आरंभिक जीवन अनेकानेक कठिनाइयों एवं परिस्थितियों से होकर गुजरा है। जीवन के कष्टों एवं आघातों से ज्यों-ज्यों इनका साक्षात्कार होता गया, त्यों-त्यों जीवन का स्वरूप निखरता गया। जीवन के आरंभ से ही उन्हें जिम्मेदारियाँ का उठानी पड़ी है! पिता के आकस्मिक मृत्यु के फलस्वरूप जीवन के प्रभात-काल में ही उन्हें सम्पूर्ण पारिवारिक-दायित्व वहन करने पड़े। परिवार का भरण-पोषण करने के लिए नौकरी भी करनी पड़ी।

लेखन-कार्य के प्रति निष्ठा एवं साहित्यिक रुचि के कारण अमृतलाल नागर ने सदैव स्वतंत्र रूप से साहित्य सृजन करना चाहा किन्तु, आर्थिक कारण उसमें अवरोध बनते रहे। पत्रकारिता से उन्होंने साहित्यिक जीवन आरंभ किया। १९३४ ई. में उन्होंने "यूथ्स यूनियन क्लब" चौक से द्विमासिक पत्रिका 'सुनीति' का संपादन प्रकाशन किया। परन्तु उसका केवल एक ही अंक निकल सका। कहना होगा कि कथाकार के रूप में भी उनका प्रारंभ से ही जीवन संघर्षशील रहा

है। वे कहानियाँ लिखते थे, पर वे कहीं प्रकाशित नहीं होती थी! इससे वे मानसिक रूप से उद्वेलित रहते थे। स्वयं नागरजी के शब्दों में- "कहानियाँ लिखता, गुरुजनों के पास जाकर उसे पास भी करा लेता, किन्तु; जहाँ कहीं भी उन्हें भेजता, वे गुम हो जाती या रचना भेजने के पश्चात् दौड़-दौड़कर पत्र-पत्रिकाओं के स्टाल पर बड़ी आतुरता के साथ देखने को जाता था कि मेरी रचना छपी है या नहीं। हर बार निराशा ही हाथ लगती। मुझे बड़ा दुःख होता था। उसकी प्रतिक्रिया में कुछ महीने तक मेरे जी में ऐसी सनक समाई कि लिखता, सुधरता, सुनाता और फिर फाड़ देता।"[14]

अमृतलाल नागर का जीवन जन्म से ही संघर्ष एवं कठिनाइयों में बीता, फिर भी मजबूती के साथ वे संघर्ष का सामना करते रहे। साहित्य के प्रति अनन्य निष्ठा एवं लगाव ही इन स्थितियों की देन है। 'सुनीति' की निष्फलता के बाद नागर जी ने १९३५-३६ ई. में 'सिनेमा समाचार' नामक एक पाक्षिक पत्रिका का संपादन किया। इसके बाद १९३८ में उन्होंने स्वयं नरोत्तम नागर के साथ मिलकर हास्य-व्यंग्य की एक पत्रिका 'चकल्लस' निकली, जो हिंदी साहित्य में बहुत लोकप्रिय हुई। १९४५ ई. में 'नया साहित्य' और १९५३ ई. में मासिक पत्र 'प्रसाद' का संपादन भी किया किंतु नागर जी की रुचि स्वतंत्र-लेखन की ओर ही विकसित होती रही।

अमृतलाल नागर परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए १९४० ई. में फिल्म संसार में पदार्पण किया। वे फिल्म सिनेरियों के लेखक के रूप में मुंबई फिल्म उद्योग में प्रविष्ट हुए। १९४० ई. से १९४७ ई. तक कोल्हापुर, मुंबई तथा मद्रास के फिल्म क्षेत्र में रहे, जहाँ वे दो प्रसिद्ध निर्माता निर्देशकों की 'किशोर शाहू' और 'महेश कौल' और विख्यात् नृत्य निर्देशक उदयशंकर के संपर्क में आए। वहाँ नागरजी बहुत सफल रहे। परन्तु यह फिल्म-जीवन नागरजी को पूर्ण रूप से प्रभावित न कर सका। यह उनकी रुचि के प्रतिकूल भी था। नागरजी ने फिल्म जीवन के सात-आठ वर्षों में लगभग २०-२१ फिल्मों के लिए लिखा और कुछ में अभिनय भी किया। कई फिल्मों में उन्होंने कहानियाँ लिखी और सिनेरियों संवाद भी लिखे। फिल्मी लेखकों में डबिंग का कार्य सिद्ध करने वाले वे पहले व्यक्ति थे। नागर जी फिल्म जगत में पूर्णतः सफल रहे किंतु; स्वतंत्र साहित्य-सृजन के लिए उन्होंने १९४७ ई. में फिल्मी जगत से नाता तोड़ लिया। इसका उल्लेख नागरजी ने अत्यंत रोचक शब्दों में किया है- "१४ अगस्त १९४७ ई. को आजादी वाली पहली रात कविवर नरेंद्र शर्मा के साथ मुंबई के सड़कों में नया जोश निहारते हुए तय किया है कि अब बालू पर लकीरें नहीं बनाऊँगा और अक्टूबर १९४७ ई. को उत्तर प्रदेश में फिर आकर

जम गया।"[15]

१९४७ ई. में नागरजी मुंबई से फिल्म क्षेत्र छोड़कर स्वतंत्र लेखन का संकल्प लेकर लखनऊ वापस आए, पर पारिवारिक, सामाजिक दायित्वों के निर्वाह हेतु उन्हें नौकरी करनी पड़ी। १९५३ ई. से १९५६ ई. में लगभग ढाई साल तक वे लखनऊ आकाशवाणी केंद्र में ड्रामा प्रोड्यूसर के पद पर रहे। यह नौकरी उनकी रुचि के अनुकूल थी, पर स्वतंत्र-लेखन कम हो पाता था। अतः साहित्य लेखन के प्रति अटूट रिश्ता और लगन के कारण नागरजी ने इस नौकरी से त्यागपत्र देकर स्वतंत्र-लेखक के रूप में जीवन शुरू किया, जो अपने अंतिम क्षण तक सक्रिय रूप से सर्जनात्मक बना रहा।

अमृतलाल नागर ने आत्मकथात्मक लेखों की पुस्तक 'टुकड़े-टुकड़े दास्तान' में उन्होंने लिखा है- "अब मैं जल्द ही दुनिया से विदा लेने वाला हूँ, विदा तो खैर होना ही है। जो एक न एक दिन आया है सो जाएगा राजा रंक फकीर। तमाम रिश्ते-नाते, प्रेम और ईर्ष्या, घृणा आदि सारे के सारे द्वंद्व।" किंतु सही मायने में उनके जीवन की एक साध थी कि- "जब मैं मरूँ तो संसार कलाकार कहकर मेरे नाम को प्रतिष्ठा दे।"

१.३ अभिरुचि एवं व्यक्तित्व-विश्लेषण :

मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण परिस्थितियों के अनुरूप होता है। व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक परिवेश के अनुसार इसका विकास होता है। किसी साहित्यकार के व्यक्तित्व का अध्ययन भी विशेष महत्व का विषय होता है, क्योंकि; साहित्य में जो विचाराधारा होती है, उसका मूल उसके व्यक्तित्व में होता है। किसी मनुष्य की योग्यताएँ कुछ ऐसी होती है, जो उसे अन्य व्यक्तियों से विलग करती है। उसे व्यक्तित्व कहा जाता है।

"प्रत्येक मनुष्य की अपनी रुचियाँ होती है। एक प्रकार से व्यक्ति की मानक रुचियाँ उसके जीवन का अहम हिस्सा होती हैं। फिर कलाकारों के संबंध में तो यह बात और भी विश्वसनीय स्वर में कहीं जा सकती है। नागरजी का शौक एवं उनकी विभिन्न रुचियाँ ही उनके व्यक्तित्व को बनाने एवं निखारने में सहायक हुई है। एक स्थान पर उनके अंतरंग मित्र डॉ. रामविलास शर्मा कहते है- "नागरजी ऊँचे गौर-वर्ण, तेजस्वी, मगर सरल व्यक्ति है। चेहरे में केवल आँखे ही आँखें हैं। एकदम घनी काली पुतलियाँ, इन आँखों में केवल एक ही भाव छलकता है, 'ढाई आखर प्रेम

का'। घृणा, क्रोध, उदासी आदि के भाव उनके होंठो पर हैं। आँखें तटस्थ रहती है। जब होंठो पर इन अस्थाई भावों की क्रीडा समाप्त हो जाती है तब आँखें फिर से मुखर हो उठती है।"[16]

चश्मे में झाँकती अमृतलाल नागर आँखें असीम स्नेह और ममत्व से बोझिल हो रहती थी। नागरजी के रहन-सहन में सुरुचि और सादगी थी। खद्दर का कुर्ता, पायजामा और कभी-कभी धोती उनका प्रिय परिधान रहा। घर में सफेद धोती को लुंगी की तरह लपेट लेते थे। पैर में खड़ाऊँ उनकी पवित्रता का बोध कराता रहा। भड़कीले कपड़े और आभूषणों से उनको नफरत थी। परम आस्थावान एवं नियमित रूप से पूजा-पाठ करने के बावजूद धार्मिक आडंबर और रुढ़ियों से वह नफरत करते थे।

समाज के इस बदलते परिवेश में नई प्रेरणा एवं उद्भावनाओं को लेकर नागरजी ने अपनी कल्पनात्मक प्रवृत्तियों को और भी उजागर करने का प्रयास किया है। वह बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे, इसलिए उनमें मौलिक उद्भावनाओं का प्रस्फुटन निरन्तर होता रहा है। नागरजी पान-भाँग और मिष्ठान के बेहद शौकीन रहें। पान का डिब्बा सदा उनके साथ रहता रहा और भाँग खाकर उन्हें लिखने का विशेष मूड़ आता था। रूस (सोवियत संघ) जाते समय भी भाँग का पाउडर बनाकर वह साथ ले गए थे। उनकी रचनाओं में भाँग प्रेमी पात्रों का बड़ा रोचक वर्णन है। नागरजी स्वभाव से विनोदी थे। उन्मुक्त भाव से हँसना और कहकहे लगाना उनकी आदत रही। बच्चों के साथ खेलना, गप्पबाजी और कभी चुहलबाज़ी, चुटकुलेबाजी करने में भी उनकी रूचि थी। 'सेठ बाँकेमल', 'नबाबी मसनद' और 'चकल्लस' के प्रकाशन से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

अमृतलाल नागर की अभिरुचियों का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। वे कहानी और उपन्यास लेखन के साथ-साथ इतिहास तथा पुरातत्व के भी उत्कृष्ट ज्ञाता और प्रस्तोता है। इतिहास के क्षेत्र में अवध के इतिहास एवं पुरातत्व में उनकी विशेष रूचि है। डॉ. रामविलास शर्मा का कथन है- "अवध के इतिहास के बारे में वह इतिहासकारों से भी अधिक जानते हैं। अवध के इतिहास के अतिरिक्त भारत में अंग्रेजों के आगमन और प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम 'अट्ठारह सौ सत्तावन' की क्रान्ति पर भी उन्होंने काफी खोजबीन की है। इस संबंध में उन्होंने 'गदर के फूल' नाम से एक पुस्तक भी लिखी। इसमें गदर के बारे में उन्होंने अनुपलब्ध प्रामाणिक तथ्य दिए। पुरातत्व के प्रति नागरजी की अपार दिलचस्पी है और उन्होंने पुरातत्व संबंधी बहुत-सी अनुपलब्ध सामग्री एकत्रित की है। एक छोटा-मोटा संग्रहालय भी उन्होंने अपने घर में स्थापित

किया है।"[17]

घुमक्कड़ मनमौजी और मिलनसार प्रकृति के व्यक्ति रहे हैं अमृतलाल नागर। विभिन्न वर्गों क्षेत्रों, जातियों और बोलियों के व्यक्तियों से वह मिलते-जुलते थे किन्तु, उनका घूमना कभी निरुद्देय नहीं हुआ। 'गदर के फूल', 'ये कोठेवालीयाँ', 'एकदानैमिषारण्डे' और 'नाच्यों बहुत गोपाल' आदि कृतियाँ इस बात का प्रमाण हैं।

भूख सहने की नागरजी में अद्भुत क्षमता थी। इसका जीवंत स्वानुभव उन्हें 'महाकाल' में हुआ है। "नागर जी को भूखे रहकर चलने और काम करने की जितनी ताकत है, उतनी बिरलों में होगी। मुंबई में किसी कारण बस उन्होंने २९ दिन तक उपवास किया था।"[18]

इतिहास से विशेष मोह रखते अमृतलाल नागर ने ऐतिहासिक, पौराणिक, आकर्षण के कारण भारत को बहुत पीछे जाकर देखा है और अतीतकालीन पृष्ठभूमि में आधुनिक रूप की जड़ों को खोज निकाला है। 'खंजन नयन, एकदा नैमिषारण्डे, मानस का हंस, शतरंज के मोहरे, सुहाग के नूपुर' और 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' आदि उपन्यास उनके इतिहास प्रेम की गवाही देते हैं। "पुरातत्व एवं ऐतिहासिक वस्तुओं के प्रति उनमें अदम्य अनुराग है। पुरातत्व की गंध उन्हें दूर से आ जाती है। लखनऊ के लक्ष्मण टीला को लेकर उन्होंने इतना हल्ला मचाया कि लोगों ने उनका नाम ही टीला खोद नागर रख दिया।"[19]

अमृतलाल नागर घर पर अनेक पुरातन वस्तुओं, मूर्तियों एवं कलाकृतियों का संग्रह देखा जा सकता है। उनके व्यक्तित्व में स्वाभिमान की झलक मिलती है। उन्होंने अपने स्वाभिमान के कारण ही बीमा कंपनी की नौकरी, अफसर के मतभेद होने से छोड़ दी, पर झुकना स्वीकार न किया। १९७० ई. में 'पद्मश्री' का प्रस्ताव भी सविनय नकार दिया था। जीविकोपार्जन के लिए सतत संघर्ष करते रहे, पर किसी के सामने झुके नहीं, सत्य के सामने किसी को कुछ नहीं माना।

अमृतलाल नागर के व्यक्तित्व और स्वभाव का सहज गुण था आत्मीयता। अपने इस गुण के कारण ही वे पुरानी और नई पीढ़ी के लेखकों में समान भाव से सबके साथ सहज तादात्म्य स्थापित कर लेते थे। लेखक के रूप में नागरजी का व्यक्तित्व एक प्रतिभा संपन्न ईमानदार, कर्मनिष्ठ, महत्त्वाकांक्षी एवं संघर्षों में पलने वाले कलाकार का है। वे सामान्य जनता, गरीब, अछूत बेसहारा लोगों के हिमायती, शोषित-पीड़ितों के प्रति संवेदनशील थे। उनकी रुचियों में

वैविध्य और वैचित्र्य है, एक ओर इतिहास, पुराण और साहित्य तीनों के प्रति गहरी रुचि है, दूसरी ओर संगीत और रंगमंच से भी उन्हें विशेष लगाव रहा है।

आस्था, लगन और कर्मनिष्ठा ने नागरजी को कथासाहित्य-जगत में शीर्ष स्थान पर बैठा दिया। अमृतमय जीवन उनके उपन्यासों में सजीव हो उठा है। हेमिंग्वे की कर्मनिष्ठा, निराला की दृढ़ता, शरदबाबू की संवेदनशीलता और प्रेमचंद की मानवतावादी जीवन-दृष्टि के समन्वित तत्वों से संगठित नागरजी का व्यक्तित्व सचमुच अप्रतिम और हर किसी के लिए स्पृहणीय है।

प्रसिद्ध उपन्यासकार वृंदावन लाल वर्मा का कथन है- "वे हिंदी के बहुत प्रसिद्ध उपन्यासकार तो हैं ही उन्होंने फिल्म जगत में पटकथाएँ लिखने का भी बड़ी कुशलता के साथ काम किया है। एक बात बहुत कम लोग उनके बारे में जानते होंगे कि भारतीय फिल्मों में डबिंग करने का प्रारंभ नागर जी ने किया है और ऐसी कुशलता के साथ किया कि लोग आश्चर्य करते रहे।"[20]

१.४ साहित्य-सृजन के प्रेरणा स्रोत :

साहित्य, मन और परिवेश ये तीनों साहित्य सृजन-प्रक्रिया के अनिवार्य घटक है। अतः किसी साहित्यकार के कृतित्व पर विचार करने से पूर्व हमें उसकी मानसिकता के निर्णायक परिवेश को भली-भाँति समझना चाहिए क्योंकि; लेखकीय परिवेश के निर्मित करने वाले व्यक्ति के आसपास की घटनाएँ और परिस्थितियाँ ही उसकी मानसिकता का नियंत्रक होती है। इसलिए साहित्य के मर्म को समझने के लिए रचनाकार के निजी जीवन के साथ ही उसके सामाजिक-धरातल को भी समझना अपेक्षित हैं। इस संदर्भ में नागरजी के साहित्य-सृजन के प्रेरणा-स्रोत का विश्लेषण करना चाहेंगे।

अमृतलाल नागर ने साहित्य-सृजन के क्षेत्र में अवतरित करने की प्रेरणा उनका पारिवारिक, वातावरण, अनेकानेक विद्वानों तथा साहित्य साधकों से मिली। इस संबंध में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका उनके पिताश्री राजाराम नागर की थी, जिसका कलाप्रेम, जीवन और व्यवसायगत प्रतिकूलताओं के मध्य भी विकास पता रहा, नागरजी की अभिरुचि पत्र-पत्रिकाओं में बाल्यकाल से ही थी।' सरस्वती', 'सप्तमी', 'गृहलक्ष्मी', 'हिन्दू पञ्च' आदि पत्रिकाएँ उन्हें घर पर ही उपलब्ध हो जाती थी।

प्रसादजी, मुंशी प्रेमचंद और शरच्चन्द्र की प्रेरणा ने तो नागरजी को साहित्य साधना के शीर्ष पर पहुँचा दिया। प्रसादजी के विषय में नागरजी ने कहा है- "प्रसाद जी से मेरा केवल बौद्धिक संबंध ही नही, हृदय का नाता भी जुड़ा हुआ है। महाकवि के चरणों में बैठकर मैने साहित्य के संस्कार भी पाये हैं और दुनियादारी का व्यावहारिक ज्ञान भी।"[21]

बंगला साहित्यकार बाबू शरच्चन्द्र से तो नागरजी बचपन से ही बहुत प्रभावित रहे। उनके साहित्य को पढ़ने के लिए ही उन्होंने बंगला भाषा सीखी। उनसे मिलने वे कलकत्ता ही नहीं, एक बार तो उनके गाँव भी पहुँच गए थे। लेखन का मूल लक्ष्य बताते हुए शरतचंद्र ने नागरजी से कहा था- "जो कुछ भी लिखो, वह तुम्हारे अपने ही अनुभवों के आधार पर हो, व्यर्थ की कल्पना के चक्कर में कभी मत पड़ना।"[22] शरत बाबू के स्नेह और बंगला साहित्य के माधुर्य ने नागरजी के साहित्य को अधिक भाव प्रधान बनाने में की भूमिका निभायी है।

पंडित रूपनारायण पाण्डेयजी से नागरजी को कथा साहित्य में अनेक प्रयोग करने की प्रेरणा मिली। श्री शिवनाथ मिश्र ने हास्य व्यंग्य की ओर नागरजी में रुझान पैदा की। १९३४-३५ ई. से महाप्राण निराला के प्रतिभा संपन्न व्यक्तित्व ने नागरजी को साहित्य का जागरूक अन्वेषी बना दिया। साहित्यिक गोष्ठियों में समय-समय पर भाग लेना व विद्वानों से विचार-विमर्श करना उनकी साहित्यिक अभिरुचि को बढ़ाने में सहायक हुआ। निरालाजी के माध्यम से नागरजी का संपर्क डॉक्टर रामविलास शर्मा से हुआ। एक अभिन्न मित्र और साहित्य-सर्जना के प्रेरक के रूप में डॉक्टर शर्मा का नागरजी के लिए सदैव अत्यधिक महत्व रहा है।

जीवन में साहित्य-सृजन के प्रेरणा विंदु के रूप में नागरजी के तत्कालीन राजनीतिक परिवेश, आर्थिक परिवेश, धार्मिक परिवेश, सांस्कृतिक परिवेश भी है। इनके कारण नागरजी साहित्य सृजन की ओर निरन्तर अग्रसर रहे। उनका प्रारंभिक साहित्यिक जीवन संघर्षशील था किंतु; अपने युग के साथ लेकर चलना भी उन्होंने हमेशा बहुत महत्वपूर्ण माना है। इन सभी कारणों से निश्चय ही अमृतलाल नागर एक महान साहित्यकार सिद्ध हुए हैं।

सर्वप्रथम गद्यकाव्य-मिश्रित कहानियों से नागरजी ने अपने लेखन का आरंभ किया है। उनका कथन है, "सन् १९२७-२८ में लिखने की टेब पड़ी। आरम्भ तुक बन्दी से हुआ किन्तु; शीघ्र ही कहानियाँ रचने लगे।....फिर दो-तीन जगह भेजना भी शुरू किया जो कहानी जाती वो....डाक टिकट के पैसे तो जरूर पचा जाती, पर संपादकों की ओर से साँस-डकार भी न लेती

थी....इसलिए उनके न छप पाने पर भी में हताश न हुआ। मुझे लगता कि मेरी कहानियाँ नि:सन्देह अच्छी हैं, पर इनमें कोई न कोई ऐसी खराबी भी अवश्य है, जिनके कारण वे संपादकों को पसन्द नहीं आती।"[23] आगे लिखते हैं- "कहानियाँ लिखता और गुरुजनों से पास भी करा लेता। परंतु जहाँ कहीं भी छापने भेजता, गुम हो जाया करती थी।"[24]

"सन् १९३३ में पहली कहानी छपी, सन् १९३४ में 'माधुरी' पत्रिका ने मुझे प्रोत्साहन दिया फिर तो बराबर चीजें छपने लगी.... सन् १९३५ से १९३७ तक मैने अंग्रेजी के माध्यम से अनेक विदेशी कहानियों तथा 'गुस्ताव स्लाबेर' के एक उपन्यास 'मादाम बोएरी' का हिन्दी में अनुवाद भी किया।"[25] अमृतलाल नागर ने अंग्रेजी कहानियों का अनुवाद करते हुए अनुभव किया- "दूसरों की रचनाएँ, विशेष रूप से लोकमान्य लेखकों की रचनाएँ पढ़ने से लेखक को अपनी शक्ति और कमजोरी का पता लगता है। यह हर हालत में बहुत ही अच्छी आदत है। इसने एक विचित्र तड़प भी मेरे मन में जगायी....इसी तड़प में मैने अपने देश की चार भाषाएँ सीखी। आज तो दावे से कह सकता हूँ कि लेखक के रूप में आत्मविश्वास जगाने के लिए मेरी इस आदत ने मेरा बड़ा ही उपकार किया है। विभिन्न वातावरणों को देखना, घूमना, भटकना, बहुश्रुत और बहुपठित होना भी मेरे बड़े काम आता है। यह मेरा अनुभवजन्य मत है कि मैदान में लड़ने वाले सिपाही को चुस्त-दुरुस्त रखने के लिए जिस प्रकार नित्य की कवायद बहुत आवश्यक है, उसी प्रकार लेखक के लिए उपरोक्त अभ्यास भी नितान्त आवश्यक है।केवल साहित्यिक बात सरणही में रहने वाला कथा लेखक मेरे विचार से घाटे में रहता है। उसे निसंकोच विविध वातावरणों से अपना सीधा संपर्क स्थापित करना ही चाहिए।"[26] इसके बाद तो उनकी कहानियाँ विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होने लगी। नागर जी का प्रथम कहानी संग्रह 'वाटिका' सन् १९३५ ई. में प्रकाशित हुआ।

१.५ साहित्य-रचना के विविध आयाम :

साहित्य रचनाकार के मनोजगत की वास्तविकताओं को शब्दों में माध्यम से संवेदना के स्तर पर घटित करने वाला कला-माध्यम है। साहित्यकार ने आदिकवि के स्वर के में जब पहली बार मन-निगूढ़ गलियों के यथार्थ को राग के धरातल पर उतारने का उपक्रम किया, तभी से वह लेखनी का हथौड़ा लेकर प्रहार की इस पाषाणी क्रिया में जुटा हुआ है। फिर भी मन के तिलिस्म को तोड़कर उसके भीतर आर-पार देखा पाना उसके लिए अभी तक संभव नहीं हो सका है।

मनुष्य अपने जीवन का भोग वैयक्तिक स्तर पर करता है, किन्तु; सामाजिक प्राणी होने के नाते वह जिस देश-काल में जीता है, उसकी मर्यादाओं और सीमाओं के भीतर विविध मानवीय संबंधों के सहारे वह समय के बड़े सवालों से टकराता भी है, साथ ही बिंबों, प्रतीकों, पात्रों और कार्य व्यापारों के माध्यम से कभी नए सिरे से मानव-मूल्यों की स्थापना में योगदान करता है और कभी अंतर्जगत की यात्रा करते हुए बाहरी दुनिया से निरपेक्ष होकर मानस-सत्यों का साक्षात्कार करता है, जिससे लेखक की सृजन-यात्रा और रचना-प्रक्रिया पर गहरी रोशनी पड़ती है।

श्री अमृतलाल नागर भी एक ऐसे रचनाकार है, जो उन्नीसवीं सदी के तीसरे दशक से हिंदी लेखन में निरंतर सक्रिय रहें हैं। वह लखनऊ के गंगा-जमुनी तथा अवध की समन्वय संस्कृति के पर्याय तो रहे ही हैं, इस नगर की साहित्यिक चतुष्टयी की वह तीसरी प्रवाहमान धारा भी रहे हैं।

अमृतलाल नागर के व्यक्तित्व-कृतित्व के सम्बन्ध में सर्वविदित है कि नागरजी अपने समय के एक बड़े लेखक होने के बावजूद लेखन के लिए ललकते या कलम साधते नए अथवा परिचित-अपरिचित हस्ताक्षरों को भाषा, उम्र आदि के दायरों से मुक्त और सहज ही उपलब्ध होकर यथेष्ठ मार्गदर्शन, प्रेरणा और प्रोत्साहन भी देते रहते थे।

साहित्य रचना के क्षेत्र में नागरजी नए-नए प्रयोग करते रहे हैं। उन्होंने उपन्यास, कहानी, संस्मरण, रेखाचित्र, जीवनी, व्यंग्य तथा बाल साहित्य और पुरातात्विक विषयों के क्षेत्र में अपनी रचनाशीलता का परिचय दिया है। सर्वेक्षण वृत्ति और अनुवाद भी उनके साहित्य-साधना के अनुपम रूप हैं। अमृतलाल नागर का व्यक्तित्व बहुआयामी एवं वैविध्य-पूर्ण था। उसी प्रकार उनका कृतित्व भी वैविध्यपूर्ण एवं बहुआयामी रहा है।

इन विविध साहित्यिक रूपों ने नागरजी के कथाकार-व्यक्तित्व को निखारा और संवारा है। यद्यपि उनका साहित्यिक व्यक्तित्व बहुमुखी है पर आज का पाठक नागरजी को उपन्यासकार के रूप में ही अधिक पहचानता है। इस पहचान का मुख्य कारण यही है कि सन् १९४३ ई. से लेकर जीवन पर्यंत वे अधिकांशतः उपन्यास-सृजन में सक्रिय रह कर कुछ-कुछ वर्षों के अंतराल पर वे एक के बाद एक उपन्यास लिखते व प्रकाशित कराते रहे हैं। 'बूंद और समुद्र', 'सुहाग के नूपुर', 'अमृत और विष', 'मानस का हंस', नाच्यों बहुत गोपाल' तो उनकी प्रसिद्धि के स्थाई स्तंभ हैं। नागरजी की प्रारंभिक कविताएँ मेघराज इंद्र के तथा कई अन्य छद्म नामों से, कहानियाँ अपने नाम और व्यंग्य पूर्ण रेखाचित्र, निबंध आदि तसलीम लखनवी के नाम से लिखे गए हैं। तदुपरांत

नागरजी क्रमशः कथाकार और उपन्यासकार के रूप में प्रमुख रूप से प्रतिष्ठित हुए।

कथा-साहित्य के दो रूप हैं-

(क) उपन्यास साहित्य

(ख) कहानी साहित्य

(क) उपन्यास साहित्य : नागर जी के प्रकाशित उपन्यास इस प्रकार है-

(१.) महाकाल (२.) बूँद और समुद्र (३.) शतरंज के मोहरे (४.)सुहाग के नूपुर (५.) अमृत और विष (६.) सात घूँघट वाला मुखड़ा (७.) एकदा नैमिषारण्ये (८.) मानस का हंस (९.) नाच्यों बहुत गोपाल (१०.) खंजन नयन (११.) बिखरे तिनके (१२.) अग्निगर्भा (१३.)करवट (१४.) पीढ़ियाँ

अमृतलाल नागरजी का कृतित्व ऐतिहासिक तथा सामाजिक दोनों प्रकार के उपन्यासों के सृजन से समृद्ध हुआ है। उन्होंने उपन्यास के क्षेत्र में सन् १९४४-४५ में 'महाकाल' लिखते हुए प्रवेश किया था और अन्तिम उपन्यास 'पीढ़ियाँ' १९९० की जनवरी में पूरा किया। उनकी रचना जब भी सामने आई तो उन्होंने तत्कालीन समस्या का स्वरूप अपने पूरे परिवेश, के साथ चित्रित किया। इस देश की बदलती हुई स्थिति और मूल्यों के परिवर्तन का चित्रण उनके उपन्यासों में इतिहास-बोध का चित्रण लिए हुए हैं। देश में जब भी कुछ घटित हुआ उसके विषय में बेझिझक होकर नागर जी ने अपने विचारों को व्यक्त किया। उनकी यह प्रवृत्ति उनके उपन्यासों में व्यक्त हुई है। सामाजिक एवं ऐतिहासिक परिवर्तन अवस्थाओं के चित्रण के साथ-साथ रचनाकार की प्रतिबद्धता उसके चैतन्य बोध को व्यक्त करती है। इस प्रकार नागर जी के उपन्यासों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है।

१. महाकाल :

अमृतालाल नागर का यह पहला उपन्यास है। यह सन् १९४७ ई. में प्रकाशित हुआ। इसमें बंगाल के भीषण अकाल का यथार्थ तथा सजीव चित्र, बंगाल के अकाल की हृदयद्रावक पृष्ठिभूमि आदि इसमें वर्णित है। उपन्यास के कथावस्तु का केंद्र बंगाल का एक छोटा सा गाँव 'मोहनपुर' है। 'पाँचू गोपाल' इस गाँव के एंग्लो बंगाली स्कूल का हेडमास्टर है। अकाल पड़ने पर पाँचू गोपाल अपने परिवार को बचाने का अविरत प्रयत्न करता है, लेकिन भूख की मार उसे

विवश कर देती है। परिवार की चिंता उसे चोरी करने के लिए विवश करती है अतः गाँव के बनिये मुनाई केवट के हाथों वह स्कूल के सामान कौड़ियों के दाम बेच देता है। उधर उसका बेटा अपनी पत्नी से वेश्यावृत्ति करवाने के लिए विवश हो जाता है। गाँव का बनिया मोनाई केवट एक ऐसा पात्र है, जो लोगों की लाशों को मेडिकल कॉलेज में बेचकर धनवान बनने का सपना देखता है। लोगों को लाशों के लिए कफन जुटाना भी कठिन हो जाता है। स्वतंत्रता से ३ वर्ष पहले बंगाल के अकाल पर यह यथार्थवादी हिंदी उपन्यास है।

२. बूँद और समुद्र :

'बूँद और समुद्र' अमृतलाल नागर का तीसरी कृति और दूसरा उपन्यास है, जिसकी रचना 'महाकाल' और 'सेठ बाँकेमल' के पश्चात् हुई। इस उपन्यास की कथा लखनऊ के चौक मुहल्ले के इर्द-गिर्द घूमती हैं। इसकी कथा की सबसे महत्त्वपूर्ण पात्र 'ताई' है। इस उपन्यास से अमृतलाल नागर की प्रथम श्रेणी की औपन्यासिक प्रतिभा का विस्फोट स्वीकार लिया गया। इसका केंद्र लखनऊ का पुराना चौक व उसके मोहल्लें है। उन मोहल्लों की बोली, भाषा, सामाजिक जीवन आदि को नागरजी ने अपनी लेखनी द्वारा चित्रित किया है। पूरे उत्तर भारतीय जनजीवन को प्रस्तुत करने वाला एक यह उनका बृहद उपन्यास है, जिसमें उपन्यासकार ने समुद्र रूपी समाज में बूंद रूपी व्यक्ति के अस्तित्व का महत्व आँकने का प्रयत्न किया है। वस्तुत: इस उपन्यास के लेखन का उद्देश्य ही व्यक्ति और समाज के यथार्थ चित्र को उभारना है।

३. शतरंज के मोहरें :

यह उपन्यास सन् १९५९ ई. में प्रकाशित नागरजी का तीसरा उपन्यास है। यह उपन्यास ऐतिहासिक है। इसमें सन् १८३७ से सन् १८९२ तक के लखनऊ के नवाबी शासन का यथार्थ चित्र अंकित करने का प्रयत्न है। ऐतिहासिक परिवेश में वैभवशाली लखनऊ नगर का विभिन्न स्तर प्रायः अतीत की सामाजिक समस्याओं के संदर्भ में 'शतरंज के मोहरें' में चित्रित हुआ है। इसमें आने वाले पात्र उपन्यास के अंत तक चलने वाले प्रमुख पात्र न होने पर भी कथावस्तु के विधान से अवध के नवाब गयासुद्दीन हैदर तथा नवाब नसीरुद्दीन के शासनकाल को उजागर करते है, जिसमें अवध के नवाबों की नीति, ईस्ट इंडिया कंपनी के अंग्रेजों के कारनामे और नवाबी शासन में चल रहे छल-प्रपंच का सजीव अंकन हुआ है।

४. सुहाग के नूपुर :

यह दक्षिण भारतीय कथानक केन्द्रित एक ऐतिहासिक कृति है। विगत इतिहास के द्वारा लेखक आधुनिक समस्याओं को स्पष्ट करते है। उपन्यास महाकवि 'इलंगोवन' द्वारा तमिल महाकाव्य 'शिलप्पादिकारम' पर आधारित है। इसमें चट्री पुत्र कोवलन उसकी पत्नी कन्नगी और नर्तकी माधवी का आंतरिक संघर्ष को प्रमुख रूप से अंकित किया गया है। नर्तकी माधुरी के साथ आकृष्ट और समर्पित कोवलन की शादी कन्नगी के साथ ही जाती है। विवाह के बाद कन्नगी सब प्रकार से पति कोवलन की सेवा करती रहती है, लेकिन वह कोवलन के पति द्वारा पहनाए गए नूपुर उसे समर्पित नही कर पाती, क्योंकि कन्नगी उन्हें अपने 'सुहाग के नूपुर' मानती है। उधर नर्तकी माधवी अभी भी कोवलन की पत्नी बनने के सपने देखती रहती है। इस प्रकार कुलबधू और नगरबधू में प्रत्यक्ष संघर्ष छिड़ जाता है। अंत में नगरबधू पागल हो जाती है। उधर कुलबधू के सती रूप को न समझने वाला कोवलन पतन के गर्त में गिरता जाता है। अंत में पत्नी के सहारे ही उसका उद्धार होता है। अंत में नागरजी अपने मंतव्य को इस प्रकार अभिव्यंजित एवं प्रतिष्ठित करते हैं- "पुरुष को केवल सती ही दे सकती है।"

५. अमृत और विष :

'अमृत और विष' अमृतलाल नागर का प्रयोगशील उपन्यास है। इसमें नागरजी ने कथानक के भीतर कथानक गूँथते हुए विकसित किया और उसे एक नया मोड़ दिया है। अपनी इस कृति के माध्यम से नागरजी ने नई पीढ़ी के युवकों में क्रांति लाने का प्रयास किया है। इसमें सड़ी-गली मान्यताओं और संस्कृतियों को जड़ से उखाड़ फेंकने का अधिक प्रयास किया है। सही अर्थों में नागरजी की 'अमृत और विष' सम्पूर्ण भारतीय जागरण की सजीव कृति है। यह रचना आधुनिक मध्यमवर्गीय सामाजिक जीवन से संबंधित है। इस उपन्यास की कथा ब्रिटिश काल से स्वातंत्र्योत्तर काल तक समावेष्टित है। उन्होंने इसके माध्यम से जनवादी दृष्टिकोण, पूँजीवादी, सामंतवादी जीवन, देश के प्रति, लोगों की भावना, लोगों का संघर्ष, अराजकता, अंग्रेज शासन, सांप्रदायिकता, युवकों का विद्रोह, नई पीढ़ी का जोश, दो पीढ़ियों की टकराहट, नारी की दासता, अंतरजातीय विवाह, विधवा विवाह आदि इन सभी समस्याओं का समाधान करने का प्रयास किया है। यह उपन्यास हमारे सम्मुख दोहरा कथानक लिए आता है। एक कथा अरविंद शंकर की है क्योंकि; उसके स्वयं के जीवन में घटित घटनाओं को दर्शाती है और दूसरी उसके द्वारा रचित उपन्यास की मूल कथा है। दोनों कथानक एक साथ अपनी स्वतंत्रता लिए हुए चलते हैं।

इस उपन्यास के प्रमुख पात्र अरविंद शंकर एक लेखक के रूप में सामने आते है। विविध समस्याओं से तंग आकर अपने पिता की तरह खुदकुशी कर लेना चाहते हैं परंतु यह खुदकुशी का काम उनका आई. सी. एस. बेटा कर लेता है। इस उपन्यास पर अमृतलाल नागर को साहित्य अकादेमी सम्मान प्रदान किया गया।

६. सात घूँघट वाला मुखड़ा :

यह उपन्यास ऐतिहासिक पृष्टिभूमि पर आधारित है। इसका प्रकाशन १९६८ ई. में हुआ है। इसका कथात्मक संगठन किवदंतियों के आधार पर कल्पना में रोचक तत्वों से पूरा किया गया है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र प्रतिपाद्य १८वीं सदी के मुगलों और अंग्रेजों के क्रमशः संघर्ष का चित्रण प्रस्तुत करता है। इस उपन्यास के सुनियोजित कथानक के अनुसार दिल्ली का मुगल सम्राट शाह आलम वृद्ध और अशक्त था। अंग्रेजों, नवाब मीर कासिम और शुजौद्दौला के संघर्ष प्रायः चल रहे थे। मीर कासिम की ओर से लड़ने वाले एक फ्रांसीसी सैनिक वाटर रेनहार्ड ने अंग्रेज को बड़ी शिकस्त दी और पटना में धोखे से १४८ सैनिक अफसरों को गुमराह कर हत्या करवा दी। वाल्टर अत्यंत महत्त्वाकांक्षी था, जो आगे चलकर समरू के नाम से अभिहित किया गया है। इस उपन्यास का कथानक बेगम समरू पर केंद्रित होने कारण 'चरित्र प्रधानता' का आभास देता है। अमृतलाल नागर ने इस उपन्यास में औरतें बेचने वाले एक व्यापारी बशीर खान को दस हजार अशर्फियों में खरीदी गई असाधारण सुन्दरी को मुन्नी बेगम समरू के रूप में चित्रित किया गया है।

७. एकदा नैमिषारण्ये :

यह उपन्यास पौराणिक कल्पना के आधार पर लिखा गया है। 'एकदा नैमिषारण्ये' को पौराणिक कोटि की औपन्यसिक कृति के अंतर्गत रखा जा सकता है। 'एकदा नैमिषारण्ये' में नागरजी ने अतीत से जोड़कर कथा को आगे बढ़ाया है। इसका कथानक भारतीय संस्कृति से जुड़ा होने के कारण प्राचीन गौरव गरिमा को इसमें मुखरित हुए हैं। इस विशाल और ज्ञानवर्धक उपन्यास में नागरजी ने चंद्रगुप्त प्रथम और समुद्रगुप्त कालीन इतिहास को आधार बनाकर पौराणिक कथाओं और प्रसंगों को अपने प्रौढ़ चिंतन के आधार पर आधुनिक संदर्भ प्रदान किया है।

एक बार अमृतलाल नागर दक्षिण की यात्रा पर तमिलनाडु गए थे। वहाँ एक मंदिर में

कथावाचक से एकदा नैमिषारण्ये सुनते ही उनके मन में भक्ति का भाव जाग उठता है। बस उन्होंने गोमती के तट पर बसे 'नैमिष' पर उपन्यास लिख दिया। काशी, कमरू-कमच्छा, लखनऊ गोमती का बहुत सुंदर चित्रण इस उपन्यास में मिलता है।

८. मानस का हंस :

अमृतलाल नागर का यह बहुचर्चित उपन्यास महाकवि तुलसीदास के जीवन पर आधारित है। तुलसीदास के जन्म से लेकर मृत्यु तक की घटना इस उपन्यास में प्रस्तुत की गई है। नागरजी ने इस उपन्यास में तुलसी के जीवन के उन व्यक्तिगत संदर्भों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है, जिन पर अब तक तुलसी साहित्य के अध्येताओं की इतनी व्यापक दृष्टि नहीं पहुँची। 'मानस का हंस' तुलसी को सच्चे मानव के रूप में प्रतिष्ठित करता है। साथ ही तत्कालीन भारत की राजनीतिक उथल-पुथल, सांस्कृतिक संक्रमण और भारतीय समाज के जीवन के परिवेश को भी यह उपन्यास सम्यक रूप से प्रस्तुत करता है। उपन्यास के आरंभ एवं अंत में तुलसी के जीवन के वाह्य साक्ष्य का सार्थक अनुशीलन मौजूद है। तुलसी की विविधतामयी प्रतिभा का निदर्शन भी इस औपन्यासिक कृति का वैशिष्ठ्य है। हिंदू और मुसलमानों के बनते-बिगड़ते संबंधों के बीच सौहार्द की फूटती किरणों के भी इस उपन्यास में तुलसी को समन्वयवाद के रूप में देखा जा सकता है।

९. नाच्यौ बहुत गोपाल :

यह अमृतलाल नागरजी का, एक सत्य घटना पर केन्द्रित उपन्यास है। यह उपन्यास केवल साहित्यिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि; सामाजिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इसमें नागर जी के सुदीर्घ जीवन के अनुभव नए शिल्प वैशिष्ट्य के साथ आकार लेते हुए नज़र आते हैं। हरिजन त्रासदी पर लिखी गई प्रतिनिधि घटना के रूप में यह उपन्यास समाज के सर्वाधिक उपेक्षित और दलित वर्ग के जीवन की गतिविधियों का संपूर्ण लेखा-जोखा है। इस उपन्यास के माध्यम से नागरजी ने ऐसी जाति की व्यथा, अत्याचार, उपेक्षित जीवन की झाँकी प्रस्तुत करने का प्रयास किया हैं, जिसे समाज में 'मेहतर' के नाम से पुकारा जाता है। इस उपन्यास का केंद्र बिन्दु निर्गुनिया है, जिसके इर्द-गिर्द, पूरी कथा घूमती है। वह संस्कारों से ब्राह्मण है लेकिन, अपनी विवशता के कारण वह मेहतरानी बनी है। उसके मन में संस्कारों और इस गन्दे पेशे का जो अंतर्द्वंद्व चलता है, उसे नागरजी ने कुशलता के साथ प्रस्तुत किया है। निर्गुनिया के कई रूप हमारे सम्मुख आते हैं।

एक वह निर्गुनिया जो पतित है, उसकी नस-नस में कामाग्नि प्रज्वलित हो रही है और वही निर्गुनिया एक वृद्ध भंगी के घर में मैला ढोने का कार्य भी करती है, आर्य समाज में भी जाती है, बच्चों का पालन-पोषण, पाठशाला चलाना और अपने डाकू प्रेमी के प्रेम में बेतरह डूबना! यह सब निर्गुनिया के अनेक पक्ष है। बाद में कामवासना के दलदल से निकलकर स्वच्छ और पवित्र जीवन की कामना करती है। इस निर्गुनिया के चरित्र को लिखकर नागरजी ने अछूतों उद्धार किया है।

१०. खंजन नयन :

सूरदास के जीवन पर केंद्रित यह अमृतलाल नागर का बहुचर्चित उपन्यास है। 'खंजन नयन' में सूरदास का व्यक्तित्व ही सबसे अधिक स्थान घेरता है। उस समय की राजनीति अस्थिरता, उथल-पुथल, उत्तेजना का छोटा सा अवसर आते ही बड़े-बड़े नृशंश कृत्य यानी अनेक राजनीतिक और सामाजिक स्थितियाँ इस उपन्यास में जगह-जगह सशक्त चित्रण में बिंबित हुई है। इस प्रकार नागरजी का प्रमुख लक्ष्य महाकवि सूरदास के प्रामाणिक जीवन-वृत्त को प्रस्तुत करना रहा है। सूर के अपने समय के साथ-साथ तेजी से बदलते घटनाक्रम को सूर के जीवन से जोड़कर देखने की कोशिश भी इस उपन्यास में हुई है।

११. बिखरें तिनके :

इस उपन्यास में अमृतलाल नागर ने समाज के यथार्थ स्वरूप का चित्रण जीते-जागते पात्रों के माध्यम से किया है। नागरजी की अन्य कृतियों की भाँति यह कृति आज के समाज की कई समस्याओं और विसंगतियों को उजागर करती है। पुरानी और नई पीढ़ी का संघर्ष, बेइमानी के प्रति युवकों का विरोध, भ्रष्टाचारी समाज में व्याप्त कुप्रथाओं को दूर करने का प्रयास अपने इस उपन्यास के माध्यम से नागरजी ने किया है।

१२. अग्निगर्भा :

एक पारिवारिक पृष्ठिभूमि में स्त्री की नियति को परिभाषित करने वाला उपन्यास 'अग्निगर्भा' दो ब्राह्मण परिवारों की कहानी है। रामेश्वर और कामेश्वर के पिता पंडित सोमेश्वरनाथ शुक्ल और सीता के पिता पंडित मिथिलेश नारायण पाण्डेय की पारिवारिक पृष्ठिभूमि के परिवारों के मुखियाओं और परिवारों की सामाजिक, आर्थिक स्थितियों के बीच कथा के सूत्र

निकलते और विकसित होते है। इस उपन्यास में नागरजी ने शिक्षित नारी की पीड़ा को बड़ी ही यथार्थता से प्रस्तुत किया है। यह एक ऐसी नारी पीड़ा है कि जो सर्वगुण संपन्न होते हुए भी पति के लिए एक बेजान वस्तु से अधिक महत्व नहीं रखती है। दहेज के लिए आज भी नारी को कितना कष्ट सहना पड़ रहा है, इसका यथार्थ चित्रण नागरजी ने इस उपन्यास में बड़े ही सुन्दर ढंग से किया है।

१३. करवट :

'करवट' अमृतलाल नागर की एक महान और सफल औपन्यासिक कृति है, जिसके माध्यम से उन्होंने आधुनिक भारत का निर्माण करने की कोशिश है। इस उपन्यास का प्रमुख उद्देश्य रूढ़िवादिता तथा अंध विश्वासों को नष्ट करना तथा देश में प्रगति लाना है। इस उपन्यास का काल खंड सन् १८५४ से लेकर १९०२ तक का है। उस काल की राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक सभी परिस्थितियों का इसमें चित्रण किया गया है। लखनऊ के शासक के पतन का क्या कारण थे? भारतीय राजाओं की विलासिता, आलस्य तथा आपस में एक-दूसरे में फूट डालना, एकता का अभाव इन सब कारणों का लाभ अंग्रेजों ने किस प्रकार से कूटनीति का जाल फैलाकर उठाया। इन सबका नागरजी में यथार्थ रूप से 'करवट' में चित्रण किया है। 'करवट' की कथा लखनऊ के एक खत्री परिवार से आरंभ होती है। इस परिवार के लाला मुसद्दीलाल का पुत्र बंशीधर उर्फ तनकुन है जो अत्यधिक होनहार तीव्र बुद्धि का शिक्षित नवयुवक है। उसका विवाह अपनी ही जाति के एक कन्या से नववय की उम्र में ही हो जाता है। उसकी पत्नी का नाम चमेली था। मात्र १२ वर्ष की उम्र में वह विद्वान बन जाता है। जिससे सारे नगर में वह मशहूर हो गया। उसकी चर्चाएँ सुनकर शहर की जानी मानी मन्नो ने अपनी एकमात्र कन्या से विवाह का प्रस्ताव तनकुन के लिए भेजा। वह तनकुन को अपना घर दामाद बनाकर पूरा कारोबार उसे सौंप देना चाहती थी। तनकुन के पिता ने इस प्रस्ताव को खुशी से स्वीकार कर लिया, लेकिन तनकुन यह नहीं चाहता था कि एक विवाह होते हुए वह दूसरा विवाह करे। पिता के द्वारा जोर दिए जाने पर वह घर छोड़कर चला जाता है। 'करवट' भारतीय आधुनिकता के सूत्र पात का इतिहास प्रस्तुत करने वाला एक मूल्यवान उपन्यास है। इस पर डॉक्टर पुष्पा वंशल के अनुसार- "इस कालावधि (१८५४-१९०२) के इतिहास का इतना व्योरेवर व तथ्यात्मक चित्रण करने वाली दूसरी कथाकृति हिंदी में नहीं है।"[27] अमृतलाल नागर ने इस उपन्यास के निवेदनम में लिखा है- "समय का परिवर्तन इतिहास की पूँजी है। गदर के बाद अंग्रेजी शासन और शिक्षा के प्रभाव से हमारे

समाज में एक नयी मानसिकता का उदय हुआ था। संघर्ष की प्रक्रियाओं में पुरानी जातीय पंचायतों को नए जातीय 'असोसिएशनों' ने करारे धक्के ही नही दिए, वरन् कालांतर में उन्हें ध्वस्त हो कर डाला। इन जातीय संघर्षों से ही नई राष्ट्रीयता ने जन्म पाया था।

"यह इतिहास ही इस उपन्यास में काल्पनिक पात्र-पात्रियों के द्वारा अंकित हुआ है। मेरा कथानायक खत्री जाति का है किन्तु; मैने यह आवश्यक नहीं समझा कि उसके जीवन में आयी हुई सभी घटनाएं भी केवल उसी जाति में घटित हुई हों। उदाहरण के तौर पर, मुकदमेंबाजी की घटना किसी और बिरादरी में हुई थी; एक प्रतिष्ठित व्यक्ति की इज्जत धूल में मिलाने के लिए उनकी सुशील व विवाहिता कन्या को दुष्टों के द्वारा उड़वा देने का कार्य किसी दूसरे नगर में हुआ था। इस प्रकार इतिहास को कल्पना से जोड़ते हुए मैने कई उचित परिवर्तन किए हैं। उपन्यास भानुमती का कुनबा होता है- कहीं की ईंट, कहीं का रोड़ा। एक अंग्रेजी कहावत के अनुसार 'इतिहास में तारीखों के अलावा और सबकुछ गलत होता है और उपन्यास में तारीखों के अलावा और सब सच।'

"कथा क्षेत्र के रूप में इस बार भी मैने अपने चौक क्षेत्र को ही उठाया है, मोहल्लों के नाम सही लिखें है किंतु; उनके जुगराफिये में फेर-बदल कर दिए है।"[28]

१४. पीढ़ियाँ :

'पीढ़ियाँ' नागरजी का अंतिम उपन्यास है। इसे उन्होंने अपने निधन के कुछ दिन पूर्व ही पूर्ण किया। इस उपन्यास का फलक विस्तृत है। लगभग एक पूरी सदी के समाज का प्रभावपूर्ण वर्णन इसमें है। पात्र और वास्तविक घटनाओं को कथानक का आधार बनाया गया है। इसमें लेखक के गहन अनुभव जगत के साथ ही समाज, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिवेश का तानाबाना, धार्मिक क्षेत्र में पनपते विद्वेष तथा विसंगति-पूर्ण अर्थव्यवस्था को उपन्यास में जीवंत अभिव्यक्ति मिली है। सब मिलकर नागरजी के उपन्यासों में एक सहज जीवन के प्रति निरंतर संवेदना का सहज विकास देखा जा सकता है। वह आधुनिक कथा साहित्य के ऐसे महत्वपूर्ण लेखक है, जिसके पास इतिहास, संस्कृति, पुरातत्व, दर्शन आदि क्षेत्रों की संस्कारशील-समझ है। उन्होंने अपने उपन्यासों में ज्ञानात्मक-सामग्री को अभिव्यक्ति दी है।

(ख) कहानी साहित्य :

श्री अमृतलाल नागर की प्रसिद्धि तो मुख्यत: उपन्यासों से है किन्तु; विविध रुचियों या अभिरुचियों ने उन्हें अन्य कथा विधाओं की ओर प्रेरित किया है। उन्होंने लेखन का प्रारंभ कहानी-लेखन से किया था। उनकी कहानियों का संसार बहुरंगी आदि है। उनकी कहानियों में जिंदगी की गहराई, मनुष्य की आशाएँ, आकांक्षाएँ, 'हास्य तथा विनोद आदि का मधुर आस्वाद एक साथ उतर आया है। उनके प्रकाशित कहानी संग्रह निम्नांकित है -

(१.) वाटिका (२.) अवशेष (३.) तुलाराम शास्त्री (४.) आदमी नही! नहीं! (५.) पाँचवाँ दस्ता (६.) एक दिल हजार दास्ताँ (७.) एटम बम (८.) पीपल की परी (९.) कालदण्ड की चोरी (१०.) मेरी प्रिय कहानियाँ (११.) पाँचवा दस्ता और सात अन्य कहानियाँ (१२.)भारत पुत्र नौरंगीलाल (१३.) सिकन्दर हार गया

(१४.) एक दिल, हजार अफसाने : लगभग सभी कहानियों का संकलन।

(३) बालसाहित्य :

बच्चों के साथ खेलना उनसे गप करना और उनकी प्रवृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करना अमृतलाल नागर की अभिरुचि का सदैव से विशेष अंग रहा है। इसीलिए बच्चों के मानसिक विकास को दृष्टि में रखते हुए उन्होंने 'नटखट चाची' (१९४०), 'बजरंगी नौरंगी' (१९६१) तथा 'इतिहास के झरोखे' (१९७०) जैसी कहानी संग्रहों, निदियाँ आजा (१९५०) जैसी पद्यकथा तथा बजरंगी (१९६९) बजरंगी स्मगलरों के फंदे में (१९७२) जैसे बालउपन्यासों की रचना कर हिंदी के बाल साहित्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। बालकों के लिए उन्होंने ६ भागों में बाल महाभारत की रचना की है। महत्वपूर्ण बात यह भी है कि उन्होंने १९४० से बाल-साहित्य (बालकथा भी) लेखन की शुरुआत की और अंतिम उपन्यास 'पीढ़ियाँ' पूरा करने के बाद उन्होंने ४ बालकथाओं के लेखन से अपने लेखकीय-जीवन को विराम दिया है।

अमृतलाल नागर का बालसाहित्य लेखन और उसकी पृष्ठिभूमि

अमृतलाल नागर का बचपन बहुत प्रतिबंधित रहा है। घर से बाहर अकेले जाने का उन्हें अवसर ही नहीं था। क्योंकि उनके दादा शिवराम नागर नहीं चाहते थे कि उनके पौत्र पर गली-मुहल्ले के बच्चों का कोई भी दुष्प्रभाव पड़े। इसलिए बालक अमृतलाल पहली मांण मंजिल में

अक्सर अपने मकान के बरामदे में खड़े होकर सड़क पर होने वाली आवाजाही, बोलाचल, आवाजों आदि को बहुत ध्यान से देखते और सुनते रहा करते थे। ऐसा ही करते हुए कभी उन्होंने बोलचाल के जो कुछ शब्द सुनें, उन्हें वो सड़क की चहल-पहल को देखते हुए एक दिन बुदबुदा रहे थे कि उनके पिता पीछे से आकर खड़े हो गए। फिर झुककर बालक अमृतलाल की बुदबुदाहट को बहुत गौर से सुनने लगे कि अचानक प्रतिक्रिया स्वरूप उनकी एक करारी चपत बेटे के गाल पर पड़ी और उनकी जबान से निकला, 'गालियाँ बकता है'। इस चपत ने बालक अमृतलाल को बहुत बाद में यह अहसास कराया कि जो कुछ उन्होंने गौर से सुनकर बोला और उस पर पिता की चपत खाई थी, वैसे ही शब्दों को गालियाँ कहते हैं। यहाँ ध्यान देने की बात है कि धुर बचपन में भी अमृतलाल नागर की एकाग्रता कितनी गहरी थी। इस गहरी एकाग्रता ने ही बाद में उन्हें उनकी पर्यवेक्षण दृष्टि को बहुत ही गहरा और एकाग्रता पूर्ण बनाया।

अमृतलाल नागर ने पहली रचना १२ साल की उम्र में की थी, जो उनके मुहल्ले चौक से प्रकाशित होने वाले अखबार 'आनन्द' में छपी थी किन्तु; वह सुरक्षित नहीं रखी जा सकी। हुआ यह था कि बालक अमृत को साइमन कमीशन के विरोध में जुलूस (१९२८) की कुछ कौतूहल पूर्ण जानकारी हो गई और वह उस जुलूस के स्थल की भीड़ के बीच चारबाग जा पहुँचा सहसा पुलिस के लाठी चार्ज की भगदड़ में बालक अमृत कब कैसे बचकर अपने को सड़क के किनारे खड़ा पाया, उसे खुद नहीं मालूम। परन्तु इस घटना का उस पर इतना गहरा असर पड़ा कि ब्रजभाषा की आठ पंक्तियों की पहली रचना का वह रचयिता हो गया। उसकी निम्नांकित केवल तीन पंक्तियाँ स्मृतियों में बसी रह गई-

कबलौं कहौ लाठी खाया करैं, कबलौं कहौ जेल सहा करिये।

......अमित पै ईस दया करिये।।[29]

उन्हें खुद तो उन्मुक्त बचपन बिताने का अवसर नहीं मिला पर स्वयं जब वह पिता बने और घर परिवार में रहते हुए या घर परिवार से वह दूर रहे, उन्होंने अपने बच्चों को स्वतंत्र रूप से सोचने-समझने यहाँ तक कि खुद निर्णय लेने के अवसर दिए।

अमृतलाल नागर की इसी सोच और समझदारी का ही परिणाम था कि जब सन् १९४० में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'बालविनोद' के संपादक ने उन्हें पत्रिका में छपने वाले कुछ ब्लाक के छापे (चित्र) दिखाए और कहा इनके आधार पर आप पत्रिका के लिए एक कहानी लिख

दीजिए। तब उन्होंने जो पहली कहानी लिखी वह थी 'नटखट चाची'। ये कहानी 'बालविनोद' के पहले अंक में छपी तो बहुत पसंद की गई और माँग की गई कि ऐसी ही और भी कहानियाँ पत्रिका के लिए लिख दीजिए। उसी समय उन्होंने जो पहली पाँच कहानियाँ 'बालविनोद' के लिए लिखी उन्हीं का पहला बालकथा संकलन था 'नटखट चाची'। इसके बाद ही अमृतलाल नागर फ़िल्म जगत में लेखन के लिए बम्बई चले गए और उनके बच्चे अपने ननिहाल आगरा। बच्चे जब थोड़ा बड़े हो गए तो उन्होंने उनसे कहा, "तुमलोग अपनी संस्था 'गृहसमाज' बनाओ और खुद संचालित करो।"

नागरजी के बड़े बेटे कुमुद, छोटे बेटे शरद और तीसरी संतान अचला, अपनी पढ़ाई-लिखाई करते हुए 'गृहसमाज' के क्रमशः महामंत्री, सभापति और खजाँची की भी भूमिका निभाते हुए, उसे संचालित करते थे। इन लोगों ने 'गृहसमाज' नाम से अपनी हस्तलिखित पत्रिका भी निकाली। नागरजी जब फ़िल्म जगत छोड़कर फिर अपने साहित्यिक-लेखन के लिए लखनऊ लौट आए तो उन्होंने अपने बच्चों के अलावा मुहल्ले के बच्चों को भी अपन भरपूर समय दिया। वे उन्हें कहानियाँ सुनाते, उनसे नाटक रचाते और उनसे सुनकर उनके मन की बातें करते। ऐसे में वह बच्चों के साथ बिल्कुल बच्चे बन जाया करते थे। बच्चों के साथ उनके इस तरह के गहरे तादात्म्य ने उन्हें बच्चों के लिए लिखने की गहरी समझ दी। इस क्रम में उनकी महत्वपूर्ण रचना 'निँदिया आ जा' (पद्य रचना) लिखी गई जो हिन्दी में लिखी गई अपनी तरह की विशिष्ट लोरी है। नागरजी जब रेडियो में ड्रामा प्रोड्यूसर कार्यक्रम भी प्रसारित करते थे तो वहाँ वे बच्चों के लिए नाटक भी लिखते और प्रस्तुत करते थे। 'सात भाई चम्पा' उसी समय बच्चों के लिए लिखी गई विशिष्ट पद्य रचना है जो मूलतः रवींद्रनाथ ठाकुर की एक रचना पर आधारित है। इसको नागरजी ने रवि बाबू की जन्म-शताब्दी (१९६१) पर लखनऊ स्थित 'मेफेयर' सिनेमा हॉल के मंच पर बहुत सफलता पूर्वक मंचित किया था। 'विकलांगों की सच्ची सेवा' इसी क्रम में बच्चों के लिए लिखा गया बहुत रोचक काव्य-रूपक है, जिसमें श्रम के महत्व को प्रतिष्ठित किया गया है।

अमृतलाल नागर बच्चों के लिए बालसाहित्य लिखते समय बिल्कुल बच्चे ही बन जाते थे और उनकी कल्पनाशीलता के स्तर पर उतरकर उनके लिए मनभावन रचनाएँ रचते थे। वह रविंद्रनाथ ठाकुर की तरह इस विश्वास के हो चले थे, "यदि सरल बनाकर समझाया जाए तो बच्चे कठिन से कठिन विषय को हृदयंगम कर सकते हैं- बच्चों को डाटने-फटकारने के बजाय अगर

उनके साथ खेला जाए और बातचीत की जाए तो उनके गुण उभरकर विकास पा सकते हैं।"[30]

बा (नागरजी की धर्म पत्नी प्रतिभा नागर) द्वारा मुहल्ले के गरीब-गुरबों और छोटे बच्चों-बच्चियों के लिए शुरू की गई निःशुल्क पाठशाला- 'कस्तूरबा बाल मंदिर' में रुचि लेते नागरजी बच्चों से घुल-मिलकर विशेष स्फूर्ति का अनुभव किया करते। अपनी लेखकीय व्यस्तताओं में से वह बच्चों के सांस्कृतिक कार्यक्रमों से जुड़ने का समय अवश्य निकाल लेते थे।"[31]

इसके बाद अमृतलाल नागर से पत्र-पत्रिकाओं और प्रकाशकों ने आग्रह पूर्वक समय-समय पर बालसाहित्य लिखवाया हैं। इनमें 'बजरंगी नौरंगी, बजरंगी पहलवान, बजरंगी स्मगलरों के फंदे में' तथा 'अक्ल बड़ी या भैंस' (सभी बाल उपन्यास), 'बालदिवस की रेल' और 'परी देश की सैर' ये इनके बाल नाटक हैं। 'आओ बच्चों नाटक लिखे' यह उनका बच्चों के द्वारा नाटक लिखने के विषय में दिया गया व्याख्यान है, जो पुस्तक रूप में भी प्रकाशित हुआ। 'त्रिलोक विजय', 'सतखंडी हवेली का मालिक' आदि उनके बालकथा संकलन हैं। अमृतलाल नागर ने बच्चों के लिए बहुत ही रोचक रूप में महापुरुषों के जीवन चरित लिखें है। बच्चों के लिए यह 'इतिहास झरोखे' शीर्षक पुस्तक में संकलित और प्रकाशित हैं। उन्होंने बच्चों के लिए महाभारत की कथा को बहुत ही रोचक और ज्ञानवर्धक रूप में लिखा है। यह लखनऊ के एक प्रकाशन द्वारा ६ भागों में बालपॉकेट बुक्स के रूप में ६ भागों में प्रकाशित हुआ था। इसके संबंध में बंधु कुशावर्ती ने लिखा है- "बच्चों के लिए महाभारत का सचमुच नया संस्करण है 'बालमहाभारत'! बालकथा लेखन में यह नागरजी के शिल्पगत प्रयोगों का नव्यतम उदाहरण भी है।....बालमहाभारत के लेखन में नागरजी की कथाख्यान शैली भी क्या खूब है कि उनका लेखन-शिल्प तथा कथावाचक बाबाजी द्वारा बच्चों की महाभारत की कहानियाँ सुनाना; दोनो एकम-एक हो गए हैं और अमृतलाल नागर--- 'बालमहाभारतकार', अर्थात् बच्चों के महाभारत के वेदव्यास।"[32]

अमृतलाल नागर का बाल साहित्य लेखन क्रमशः निम्नवत् प्रकाशित होता रहा है-

(१.) नरखत चाची (२.) निन्दिया आ जा (३.) बजरंगी नौरंगी (४.) बजरंगी पहलवान (५.) बाल महाभारत (६.) इतिहास झरोखे (७.) बजरंगी स्मगलरों के फंदे में (८.) हमारे युग निर्माता (९.) छः युग पुरुष (१०.) अक्ल बड़ी की भैंस (११.) आओ बच्चों नाटक लिखे (१२.) सतखण्डी हवेली का मालिक (१३.) फूलों की घाटी (१४.) बाल दिवस की रेल (१५.) सात भाई चम्पा (१६.) इकलौता लाल (१७.) साझा (१८.) सोमू का जन्मदिन (१९.) शांति निकेतन के सन्त का बचपन

(२०.) त्रिलोक विजय

नागरजी का समस्त बालसाहित्य 'संपूर्ण बालरचनाएँ : अमृतलाल नागर' शीर्षक से सन् २०११ में प्रकाशित हो गया है।

(४) नाट्य साहित्य एवं रंगमंचीय-जीवन :

अमृतलाल नागर अपने कथा साहित्य उपन्यास एवं कहानी के बाद नाट्य साहित्य या नाट्य -रचना में भी सफल रहे हैं। "अमृतलाल नागर का अपने बचपन, किशोर और फिर किशोरोत्तर-जीवन में रंगमंच से नाता बना रहा है। इस नाते को नैरंतर्य और गतिशीलता भले न मिली हो किन्तु, नागरजी में पनपी हुई रंगवृत्ति की जड़ों को गहराई तक पहुँचाने वाले बालकों से यह यथा -अवसर जुड़ता जरूर रहा है।"[33] अमृतलाल नागर ने नाटक-रंगमंच से जुड़े अपने शौक के बारे में लिखा है, "बचपन में स्वयं मैने भी मित्रों की टोली के साथ नाटक खेले हैं-- एकाध बार स्कूलों में और तीन-चार बार अपने मुहल्ले में....सात वर्ष फिल्म व्यवसाय में रोटी कमाते हुए अक्सर संवाद-निर्देशक का काम भी मैने किया था।....वह पुराना शौक नए सिरे से जागा। सन् १९४८ में लखनऊ वापस आ जाने पर नाटक लिखने का शौक सामाजिक उपयोगिता के विचार से मुझे गरमाने लगा....पत्नी....की पाठशाला के बच्चों को अक्सर शनिवार के दिन छोटे-छोटे नाटक और कभी-कभी छाया नाटक खेलाने लगा। मै कल्पना के अनेक खेल उनसे रचवाता। अभिनेता बनने-बनाने से पूर्व बच्चों की कल्पनाशीलता को विकसित करना नितांत आवश्यक है।"[34]

अमृतलाल नागर के नाटक रंगमंच से जुड़ाव की पृष्ठिभूमि में उनके पिता राजाराम नागर भी रहे हैं क्योंकि; वे (नागरजी के पिता) तत्कालीन लखनऊ के रंगमंच में अभिनेता एवं निर्देशक के रूप में जुड़े थे। नागरजी के पितामह पंडित शिवराम जानी के अधीन पंडित माधव शुक्ल जब स्थांतरित होकर इलाहाबाद बैंक की चौक शाखा में आए तो राजाराम नागर की, नाटक-रंगमंच की सक्रियताओं में गतिशीलता बढ़ी। पंडित राजाराम के निधन के पश्चात् अमृतलाल नागर के ऊपर पारिवारिक जिम्मेदारी आने के बाद अमृतलाल नागरजी फ़िल्म संसार से जुड़ने के लिए बम्बई चले गए, तब उन्हें फिल्मों के निर्माण की प्रक्रिया में जो व्यावहारिक रंगमंचीय अनुभव हुए तथा वहाँ रहते हुए उन्होंने हिन्दी, मराठी और गुजराती नाटकों के अलावा पारसी-रंगमंच के जो नाटक देखे, उन सबसे लेखक अमृतलाल नागर को नाटक-रंगमंच के संबंध में पर्याप्त जानकारी और अनुभव हुए। इसके बाद जब वे वापस लखनऊ आए तो उन्होंने लिखा है- "मैने अपने नगर

में जगह-जगह नवयुवकों में यह 'नाटक रंगमंच का' शौक जगाया। धीरे-धीरे कुछ अभिभावकों ने मेरे कहने से अपनी लड़कियों को भी नाटक में भाग लेने की अनुमति दे दी। ६-७ वर्षों तक निरंतर मेरी शामें प्राय: नाटक या उसके रिहर्सल कराते हुए बीती। लखनऊ विश्वविद्यालय, पत्रकार संघ, स्कूलों और मुहल्लों के उत्सवों में नाटक करने लगे। इस शौक ने मुझे दोहरा अनुभव दिया- एक तो यह कि अभिनेताओं द्वारा विभिन्न चरित्र-चित्रण कराते हुए स्वयं मेरी कल्पनाशीलता बढ़ी। दूसरे दर्शकों के समझने और बाँधे के गुण हाथ लगे। तब यह समझ में आया कि सिनेमा की तरह ही नाटकों के दर्शकों को भी बाँधने रखना एक कला है।....नाटक प्रस्तुत करने वालों में यदि दर्शकों को बाँधे रखने की समझ होती है तो परम उदार जन-जनार्दन उसकी गलतियों को भी क्षमा कर देते हैं।"[35]

नागरजी ने लखनऊ में प्रेमचंद के 'गोदान' का मंचन सन् १९५५ में किया। तब आचार्य नरेंद्र देव लखनऊ विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे। उन्होंने नागरजी को बुलाकर लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रसादजी के नाटक का मंचन कराया। प्रेमचंद की कहानी 'ईदगाह' का मंचन भी १९५५ के आस-पास लखनऊ इप्टा के तत्वावधान में यहाँ के 'रिफाहे-आम-क्लब' में नागरजी के निर्देशन में हुआ था। इस मंचन को जिला प्रशासन ने करने से मना किया, पर नागरजी ने यह आदेश मानने से इंकार कर दिया। फलत: नागरजी और इप्टा के लोगों पर मुकदमा चला और ये मुकदमा हाईकोर्ट तक गया जहाँ से नागरजी और इप्टा के पक्ष में न केवल फैसला हुआ बल्कि; १८६८ में अंग्रेजों द्वारा लागू किया गया 'ड्रामा परफार्मेंस ऐक्ट' का उत्तर प्रदेश से निर्मूलन भी कर दिया गया क्योंकि; उपर्युक्त ऐक्ट के रहते नाटक करने से पहले सरकार की अनुमति लेना हमेशा अनिवार्य रहती रही है।

इसके बाद भी नागरजी कुछ वर्षों तक जब तब नाटकों का निर्देशन और मंचन करते रहें हैं। उन्हें इस सबके योगदान के लिए उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी द्वारा समादृत भी किया गया।

अमृतलाल नागर ने १९५२ से १९५५ के बीच लगभग ढाई वर्ष तक आकाशवाणी लखनऊ में ड्रामा प्रोड्यूसर के रूप में भी काम किया। यहाँ उन्होंने सबसे महत्वपूर्ण काम ये किया कि तब तक रेडियो में उर्दू और अरबी फारसी बहुल नाटकों के मंचन का जो सिलसिला चला आ रहा था, नागरजी ने उससे रेडियो के नाटकों को मुक्ति दिलायी। केशवचंद्र वर्मा ने लिखा है, "नागरजी ने

रेडियो में रहकर उर्दू- बोझिल पुराने ढर्रे के नाटकों से प्रसारण को मुक्त करा दिया। नाटकों का नया सिलसिला शुरू हुआ।"[36] आकाशवाणी लखनऊ के समाचार वाचक श्री यज्ञदेव पंडित ने बताया है कि नागरजी ने रेडियो लखनऊ में रहते हुए नाटकों को प्रस्तुत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उसके विषय में यज्ञदेवजी ने लिखा है, "नागरजी ने ७ दिसंबर, १९५३ से ३१ मई, १९५६ तक स्टॉफ आर्टिस्ट के रूप में आकाशवाणी की सेवा की। इस अवधि में उनके साहचर्य से हम लोगों ने उनसे बहुत कुछ सीखा। उनकी डायलॉग की एक विशिष्ट शैली थी। वे आवाज में उतार-चढ़ाव और नाटकीयता के पक्षधर थे।"[37]

यज्ञदेव पंडितजी ने एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात यह भी लिखी है, "नागरजी, रेडियो में व्यवस्था के विरुद्ध अपने संघर्ष के क्षणों में अक्सर यह बात कहा करते थे कि वे सदा अपने खद्दर के कुर्ते के दाहिनी जेब में चवन्नी रखते थे जो उनकी परिस्थितियों के साथ समझौता करने की अधिकतम सीमा की द्योतक थी।"[38]

नागरजी के बड़े पुत्र कुमुद नागर ने अपने पिता अमृतलाल नागर के विषय में लिखा है कि तत्कालीन सूचना एवं प्रसारण मंत्री डॉ. केशकर के निमंत्रण पर ही बाबूजी ने आकाशवाणी लखनऊ में ड्रामा प्रोड्यूसर का पद दिसंबर सन् १९५३ में संभाला....उन्होंने आकाशवाणी के लिए नाटक लिखे और प्रोड्यूस किए....इस दौरान उन्होंने रेडियो नाट्य-शिल्प को लेखन और प्रस्तुतिकरण, दोनों ही स्तर पर नए आयाम दिए।

"तब तक सर्वमान धारणा थी कि रेडियो नाटक चूँकि शब्द और ध्वनि का माध्यम है, इसलिए गूँगा अभिनेता और गूँगा चरित्र रेडियो नाटक के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है। बाबूजी ने इस मान्यता को अपने नाटक गूँगी द्वारा ध्वस्त कर दिया। इस नाटक का केंद्रीय पात्र एक गूँगी (प्रताड़ित बहू) थी। कुछ एक स्थानों पर उस गूँगी की ऊँ आँ या गूँ गाँ भरी कराहों के अलावा उसका कोई संवाद नहीं था। परन्तु नाटक अन्य पात्रों द्वारा बोले गए संवादों से उस स्त्री का रूप, चरित्र, उसका कष्ट, प्रताड़ना इस कदर सजीव हो उठे थे कि सुनने वाले अस्-अस् कर उठे।....रेडियो की शब्दावली में बाबूजी 'स्पोकन वर्ड' (बोलने की भाषा, जो लिखित भाषा से कई प्रकार से अलग हो जाती है) के आचार्य थे। उनकी यही खूबी उनके उपन्यासों, कहानियों और नाटकों का भी सबल पक्ष रही है। बंबई, मद्रास के फिल्मी दिनों के संवाद-लेखन के अनुभव ने भी उनका बड़ा साथ दिया था, इसलिए वह रेडियो-टॉकर के रूप में भी बहुत सफल रहे।

हांलांकि ब्राड कास्टिंग के पुराने मानदंड के अनुसार बाबूजी की आवाज अच्छी नहीं कही जा सकती--- तीखी, हाईपिच्ड आवाज, जिसमें बेस का अभाव था--- लेकिन बोलने की शैली और शब्द चयन उनकी अपनी विशेषता थी, जिन्होंने उन्हें आला दर्ज का ब्राड कास्टर बनाया। रेडियो नाटक के क्षेत्र में अनेक कलाकार बाबूजी की निर्मिति हैं। आकाशवाणी ने बाबूजी को उनकी इन्हीं अमूल्य सेवाओं के लिए अपने स्वर्ण जयंती वर्ष १९७७ में विशिष्ट सम्मान से सम्मानित भी किया था।"[३१]

उपर्युक्त विवरण और विभिन्न उद्धरणों में व्यक्त किए गए विचारों और कथनों से बिल्कुल स्पष्ट है कि नागरजी हिन्दी नाटक रंगमंच और रेडियो माध्यम में रेडियो-नाट्य की विधा में अभूतपूर्व योगदान देने वालों में प्रमुख रहे हैं।

अमृतलाल नागर के द्वारा लिखित नाटक इस प्रकार है-

(१) युगावतार (२) बात की बात (३) चंदन वन (४) चक्करदार सीढियाँ और अँधेरा (५) उतार चढ़ाव (६) नुक्कड़ पर (७) चढ़त न दूजों रंग

(१) युगावतार :

'युगावतार' भारतेंदु हरिश्चंद्र के व्यक्तित्व पर आधारित कृति है। इसकी रचना सन् १९५५ में हुई और प्रकाशन सन् १९७३ में हुआ। इस नाटक का मंचन करने के लिए महादेवी वर्माजी ने अमृतलाल नागर को विशेष रूप से इलाहाबाद बुलाया था। इसके लिए महादेवी जी ने रंगवाणी संस्था की स्थापना भी की थी। इसी संस्था के माध्यम से और नागरजी के निर्देशन में 'युगावतार' नाटक तैयार किया गया और इलाहाबाद में मंचित हुआ। इसके मंचन में नागरजी ने फिल्म जगत बम्बई में रहते हुए जो तकनीकी अनुभव और जानकारियाँ पायी थीं, उनका नाटक के मंचन में अधिकतम और सफल उपयोग किया था। 'युगावतार' नाटक का महत्व और उनके द्वंद्व को प्रदर्शित करने में कोई कोताही भी नहीं की थी।

(२) बात की बात :

'बात की बात' नागर जी के प्रह्सनो का संग्रह है, जिसका प्रकाशन सन् १९७४ में हुआ। इसमें 'बात की बात', 'सेठ बाँकेमाल', 'बाँकेमल फिर आ गये', 'अबीर गुलाल', 'प्रेम की चकल्लस', 'मुफलिश का रेडियों' जैसे श्रेष्ठ नाट्य प्रह्सनों के माध्यम से माध्यम वर्गीय समाज की जिंदगी के

आस-पास के पाखंड, अंधविश्वास, झूठी ज्ञान, बनावट-दिखावट, कृत्रिम सभ्यता आदि मनोरंजन विकृतियों को न सिर्फ पहचानने का बल्कि; उनका पर्दाफाश करने का भी लेखक ने महत्वपूर्ण प्रयास किया है।

(५) संस्मरण :

(१.) 'जिनके साथ जिया' (१९७३) नामक कृति में नागर जी की साहित्यिक यात्रा में साथियों के रोचक-संस्मरण संकलित है। इस कृति में प्रसाद, निराला, अंबिकाप्रसाद वजपेयी, सनेही जी, शरतचन्द्र, रूपनारायण पाण्डेय, डॉ. रामविलास शर्मा, नरेंद्र शर्मा, नरोत्तम दास नागर जैसे साहित्य कर्मियों के व्यक्तित्व के अनेक अछूते पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है।

(२.) 'सुधियाँ कुछ अपनी कुछ अपनों की' अमृतलाल नागर जी के संस्मरणों की यह पुस्तक उनके निधन के बाद नागरजी के छोटे पुत्र डॉ. शरद नागर ने संकलित और संपादित करके लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद से २०१४ में प्रकाशित करायी थी। 'जिनके साथ जिया' में जो संस्मरण प्रकाशित नहीं हो पाए थे, उन्हें शरद नागर ने इस पुस्तक में संकलित किया है। इसमें नागरजी के कुल ३७ संस्मरण संकलित हैं।

(३.) 'उजास की धरोहर' नागरजी से संबंधित संस्मरणों की पुस्तक है, इसमें हिंदी के लेखकों, आलोचकों, संपादकों, कवियों, कहानीकारों, फिल्म के अभिनेताओं आदि के साथ नागर जी के बालसखा श्री ज्ञानचंद जैन के संस्मरणों को शरद नागरजी ने संग्रहित और संपादित रूप में एकत्र कर दिया है। इनमें कुल ३४ संस्मरण संग्रहित हैं।

(६) जीवनी :

'चैतन्य महाप्रभु' इस कृति की पूर्व पीठिका में देशकाल की स्थितियों का चित्रण किया गया है, जिससे तत्कालीन एवं युगचेतना का स्वरूप प्रतिबिंबित होता है। पूर्वपिठिका में वर्णित यही वातावरण चैतन्य महाप्रभु के व्यक्तित्व को जागरित, प्रपंच से सर्वथा दूर और अलौकिकता की उच्च भूमि पर प्रतिष्ठित करता है।

(७) आत्मकथा :

अमृतलाल नागर ने अपनी आत्मकथा तो नही लिखी, पर उनके आत्मगत-कोटि के लेखों

का संकलन 'टुकड़े-टुकड़े दास्तान' उनकी आत्मकथा की प्रतीति कराता है। 'टुकड़े टुकड़े दास्तान' का संकलन और संपादन भी नागरजी के छोटे पुत्र शरद नागरजी ने किया है। नागरजी ने इस पुस्तक की भूमिका लिखी है, जिसमें वह दर्ज करते हैं- "आत्मकथा के संबंध में सदा से मेरा यह मत रहा है कि उसे कोरी अहम कथा बनाकर लिखने से बेहतर है न लिखना। 'हंस' के आत्मकथांक के लिए अपने परम मित्र मुंशी प्रेमचंद के आग्रह पर जयशंकर प्रसादजी ने एक कविता लिखी थी, जिसकी केवल अंतिम पंक्ति ही मुझे याद रह गई है और शायद वही मेरे लिए इस समय काम के लिए काफी भी है- 'क्या ये अच्छा नही कि औरों की सुनता मैं मौन रहूँ?" फिरभी कुछ विभिन्न साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं और कुछ, आकाशवाणी के द्वारा मांग पर यह; 'टुकड़े-टुकड़े दास्तान' आखिर बन ही गई। इस टुकड़े-टुकड़े दास्तान में भी मैने खुद को झूठ और बनावट से दूर रखने की हरचंद कोशिश की है। बस, इतना ही कह सकता हूँ।"[40] यह पुस्तक नागर जी ने अपनी सहधर्मिणी प्रतिभाजी को समर्पित की है।

(८) हास्य-व्यंग्य कृतियाँ :

अमृतलाल नागर ने आजीवन हास्य-व्यंग्य की विविधता पूर्ण रचनाएँ लिखी हैं, जिसमें 'नवाबी मसनद' और 'सेठ बाँकेमल' उनकी हास्य-व्यंग्य की दो महत्वपूर्ण प्रारम्भिक कृतियाँ हैं। इन्हें बहुधा लोग नागरजी का उपन्यास समझ बैठतें है। वे (नागरजी) इससे सहमत नहीं थे। नागर जी के छोटे पुत्र डॉ. शरद नागर ने नागरजी की इस बात को अपनी इस एक पंक्ति में मुकम्मल तौर पर तस्दीक कर दिया है- "नवाबी मसनद तथा सेठ बाँकेमल वह स्वयं उपन्यासों में नहीं गिनते थे।"[41]

(१.) सेठ बाँकेमल- यह अमृतलाल नागर की हास्य व्यंग्यपरक कृति है। नगरजी भी इसको अपननी हास्य-व्यंग्य की कृतियों के अंतर्गत ही रखते हैं। कुछ लोग इसे उपन्यास मानते है। इसमें मुख्यतः ब्रजभाषा बोलने वाले दो चरित्रों के माध्यम सेनागर जी ने हास्य-व्यंग्य की अपनी अनूठी शैली से परिचित कराया है। छोटे-छोटे हास्य-व्यंग्य मिश्रित प्रसंगों की उद्भवना ही इस कृति की विशिष्टता है।

(२.) 'कृपया दाएँ चलिए' (१९७३)- यह नागरजी के लिखे हुए १३ हास्य-व्यंग्य प्रधान लेखों का संग्रह है। इस संग्रह की रचनाएँ मनोरंजक होने के साथ ही साथ समाज की सड़ी-गली कुरीतियों पर चोट करती है।

(३.) चकल्लस- यह नागरजी की चुनी हुई हास्य व्यंग्य रचनाओं का संचयन है।

(४.) नवाबी मसनद (५.) हम फिदाये लखनऊ (६.) मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएँ।

(९) अनुदित साहित्य :

श्री अमृतलाल नागर ने निम्नलिखित पुस्तकों या रचनाओं का अनुवाद किया है।

(१.) विसाती- मोपासाँ की कहानियों का अनुवाद

(२.) प्रेम की प्यास- फ्लैवर के उपन्यास 'मैडम दो परी' का भाषानुवाद है।

(३.) कला पुरोहित- एन्टन चेखव की कहानियों का अनुवाद।

(४.) आँखों देखा गदर- विष्णु भट्ट गोडशे कृत मराठी पुस्तक 'माझा प्रवास' का हिंदी रूपांतरण है।

(५.) दो फक्कड़- कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी के तीन गुजराती नाटकों का अनुवाद है।

(६.) सारस्वत- मामा वरेरकर के मराठी नाटक का अनुवाद।

(१०.) पत्र-पत्रिकाएँ :

'सुनीति' एक फिल्म पत्रिका और 'चकल्लस' पत्रिकाएँ अमृतलाल नागर ने १९३४-३५ से १९३८ तक निकाली है। सन् १९३८ में अमृतलाल नागर ने श्री नरोत्तम नागर के साथ मिलकर हास्य व्यंग की साप्ताहिक पत्रिका 'चकल्लस' का सम्पादन किया है। इसके उपरांत नागर जी ने पत्र-पत्रिकाओं में भी काफी योगदान दिया था।

१.६ फिल्मी दुनिया से संबंध

नागरजी का परिवार बढ़ रहा था। भाई बड़े हो रहे थे, घर का खर्च भी बढ़ रहा था, साहित्य सेवा से वे अपनी गृहस्थी का खर्च पूरा करने में असमर्थ थे। वे बंद कमरे में रहकर साहित्य सेवा करने वाले साहित्यकार न थे, पर्यटन उन्हें प्रिय था। अतः धन की लालसा एवं आवश्यकतवश हुई। ५ मार्च १९४० ई. को अन्य हिंदी साहित्यकारों जैसे प्रेमचंद, सुदर्शन, भगवतीचरण वर्मा आदि की भाँति भाग्यलक्ष्मी को आजमाने अमृतलाल नागर भी मायानगरी मुंबई पहुँच गए।

१९४० ई. से १९४७ ई. तक वह कोल्हापुर, मुंबई तथा मद्रास के फिल्म क्षेत्र में रहे। वहाँ वे श्री किशोर शाहू और महेश कौल जैसे दो प्रसिद्ध निर्माता-निर्देशकों के संपर्क में आए। इन तीनों प्रगाढ़ मैत्री रही हो परन्तु यह रंग-बिरंग जीवन नागरजी को रास न आया। अर्थाभाव में कई दिन उनको भूखा भी रहना पड़ा। अंत में नागरजी ने संवाद-लेखन और फ़िल्म लेखन के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया। फिल्मी जगत में साहित्यिक परिष्कृत रुचि के लोग बिरले थे। उस समय फिल्मी जगत में फैले अनाचार तथा अवगुणों को लेकर नागर जी लिखते है- "सन् १९४० ई. में मेरे फिल्म क्षेत्र में प्रवेश करने का समय 'युग-संधि' का था। पुरानी थिएट्रिकल कंपनियों के अभिनेता, बाजारू, गानेवालियों और लेखक मुंशी तक बहुतायत में थे और आमतौर पर शोहदापन अधिक था। लेकिन मुंशीगण सेठों के मुसाहिब थे। कहानियों में धूम-धड़ाके और मारपीट भी हुआ करती थी। भौड़पन और भोग-विलास की ही धूम थी। कुछ स्टूडियोज में सेठों ने अपने लिए विलास कक्ष भी बना रखे थे। प्रेमचंद जी निराश होकर लौट गए। उग्र जैसे-तैसे निभाकर लौट आए थे और उन दिनों मुंबई में ही थे। कविवर प्रदीप जी व सुदर्शन अलबत्ता जमें हुए थे। पढ़े-लिखे सुसंस्कृत अभिनेताओं, टैक्नीशियनों और लेखकों की बढ़ती भीड़ के कारण, पुराने लोगों में जलन और खूड़पेंच का माहौल पैदा हो है था।"[42]

ऐसी विपरीत वातावरण व कटु अनुभवों को झेलते हुए भी नागरजी की प्रतिभा नए आयाम प्रस्तुत करने में सफल हुई है। तकरीब २०-२१ फिल्मों का कथा संवाद लिखने का कार्य उन्होंने किया है। पहली बार नागरजी ने फिल्मों में डबिंग का काम किया और उसमें नागरजी अत्यंत सफल रहे। प्रसिद्ध साहित्यकार वृन्दावनलाल वर्मा ने इनकी डबिंग कला की योग्यता के बारे में लिखा है- "वे हिंदी में बहुत प्रसिद्ध उपन्यासकार तो हैं ही, उन्होंने फिल्म जगत में पटकथाएँ लिखने का काम भी बड़ी कुशलता के साथ किया है। एक बात बहुत कम लोग उनके बारे में जानते होंगे की भारतीय फिल्मों में डबिंग कला का प्रारंभ उन्होंने किया है और ऐसी कुशलता के साथ किया है कि लोग आश्चर्य करते है।"[43]

डबिंग कला के बारे में अपनी सफलता को लेकर नागरजी स्वयं लिखते है- "जहाँ तक मेरा अनुमान है, बिना किसी प्रकार की नक्शेबाजी दिखलाए हुए ही मैं यह कह सकता हूँ कि भारतीय फिल्मी लेखकों में डबिंग का कार्य सिद्ध करने वाला मैं पहला ही व्यक्ति था। मुझे सबसे पहले रूसी फिल्म 'नसीरुद्दीन इन बुखारा' को, हिंदी में डब करने में सफलता मिली। तथा दूसरी रूसी फिल्म 'जोया' में और अधिक सफलता मिली और मैने इसे पाँच बार डब किया। यह

कारवाँ निरंतर बढ़ता ही गया। भारत कोकिला श्रीमती एम.एस. शुभलक्ष्मी की तमिल फिल्म 'मीरा' का हिंदीकरण करने में सफलता सिद्ध की। कविवर नरेंद्र शर्मा जी ने इस फिल्म में और कमाल किया। उनके कई सीन स्थलों पर डबिंग शास्त्र का प्रयोग सरस रूपेण मैने किया।"[44]

इस तरह लगातार सात साल तक फिल्म जगत में काम करके अमृतलाल नागर अपना स्थान-मान मजबूत बना बैठे थे। इस थोड़े समय में वह बहुत कुछ देख-झेल चुके थे। मुंबई के कई फ्लैटों में पैसे की प्यास बुझाने के वास्ते भले घर की लड़कियों, औरतों से वेश्यावृत्ति कराई जाती थी। सेठ, साहूकारों की पूँजी वेश्याओं के ठोकर पर गिरती थी। 'खाओ पियो मौज करो' की संस्कृति झूठा प्रदर्शन, झूठी मान्यताएँ। धंधे के नाम पर इंसानियत को भी धंधे की चीज बनाने वाले इस शहर से वह तंग आ गए थे। वह लिखते है- "१४ अगस्त १९४७ आजादी की पहली रात कविवर श्री नरेंद्र शर्मा के साथ बंबई की सड़कों में नया जोश निहारते हुए यह तय किया कि अब बालू पर लकीरें नहीं बनाऊँगा। गाँधीवादी आदर्श में चलती दुकान बढ़ा दी और तीन अक्तूबर १९४७ को चले और अपने उत्तर प्रदेश में फिर आकर जम गया।"[45] इस तरह के अनुभव नागरजी को साहित्य की ओर पुनः खींच ले आये।

अमृतलाल नागर के फिल्मी दुनिया में जाने और वहाँ पर अपनी लेखकीय प्रतिभा का परचम फहराने के बारे में नागरजी के बड़े पुत्र श्री कुमुद नागर ने लिखा है- "बाबूजी, भाग्य के साथ विभिन्न दाँव आजमाते हुए भी जब उसे पटखनी नहीं दे पाए तो सन् १९३९ में अखाड़ा बदलने का फैसला कर लिया और लखनऊ से दुकान बढ़ाकर मुंबई चले गए। मध्यम वर्गीय शहर लखनऊ का २३ वर्षीय युवक अमृतलाल नागर कुर्ता, पैजामा और बास्कट पहने हुए फिल्मी दुनिया में दाखिल हुआ....लेकिन बाबूजी के अलमस्त स्वभाव, उनकी चुस्त और मुहावरेदार भाषा ने शीघ्र ही फिल्म संसार में उनकी पैठ बना दी।"[46]

बाबूजी का फिल्मी कैरियर खासा सफल रहा है। संवाद और सिनेरियो, दोनों ही क्षेत्रों में बाबूजी ने फिल्म इंडस्ट्री को नई ताजगी दी।......जिसने कभी छोटी उम्र में ही निश्चय कर लिया हो कि 'मैं लेखक बनूँगा' और आजीवन उस संकल्प से प्रतिबद्ध रहे, इसे एक करिश्मा ही कहा जाएगा। उनकी दूसरी क्षमता यह थी कि वे दो नावों पर पाँव जमाने में सफल थे। वह फिल्मों का काम पैसे के लिए कर रहे थे क्योंकि; परिवार पालना था और स्वान्त: सुखाय तथा यश के लिए उपन्यास की भी तैयारी कर रहे थे। फिल्म राइटिंग के साथ ही उन्होंने सन् १९४४ के बंग दुर्भिक्ष

पर एक महत्वपूर्ण उपन्यास 'महाकाल' (परवर्ती संस्करण 'भूख' शीर्षक से प्रकाशित) भी दिया। 'सेठ बांकेमल' जैसा उम्दा हास्य भी उन्हीं परिस्थितियों में भी उपजा।"

इसी क्रम में कुमुद नागर ने नागरजी की उक्ति उद्धृत की है- "मैं विनोद शंकर व्यास जी की तरह ५१ कहानियाँ लिखकर ही अमर नहीं बनना चाहता। महत्वाकांक्षी हूँ, सोचता हूँ- किसी बड़ी आलमारी में कम से कम दो खाने तो मेरी किताबों से भर ही जाएँ। इससे कम नहीं लिखना चाहता।"[47]

श्री अमृतलाल नागरजी के छोटे पुत्र डॉ. शरद नागर के अनुसार, "मोहमयी मायानगरी मुंबई की मोह की बेड़ियाँ तोड़ने का फैसला तो उन्होंने १४-१५ अगस्त, सन् १९४७ की रात को, स्वाधीनता दिवस के शून्य प्रहर में ही कर लिया था......हमें आज भी याद है- २ अक्टूबर को गांधी जयंती थी, ३ को हम मुंबई से वापस लखनऊ चले गए। मुंबई में १४ अगस्त, (सन् १९४७) की रात को मैं व नरेंद्र शर्मा रातभर मुंबई की सड़कों पर घूमते रहे थे। ब्लैकआउट था। तभी मैंने सोच लिया अब बालू पर लकीरें नहीं खींचूँगा, बैठकर लिखेंगे और ऐसी जगह कहीं रहेंगे, जहाँ अपना बस चले।....आगे लिखे जाने वाले उपन्यास (बूँद और समुद्र) के नोट्स सन् १९४५-४६ से ही डायरी में लिखने प्रारंभ कर दिए थे और ३ अक्टूबर १९४७ को मुंबई की फिल्मी दुनिया को खैरबाद करके रुखसत ली और अपनी इल्मी दुनिया के प्रति मुखातिब हुए।"[48]

नागरजी ने फिल्म के अनुभवों के संबंध में चर्चा करते हुए यह भी कहा है- "देखो, इससे एक चीज आती है लिखने की समझ। यह कहना कि लिखने के लिए अपना गुरु आप ही बनना होता है, यह कुछ हद तक सही हो सकता है। सच यह है कि लिखने के लिए बहुत से गुरूओं का सहारा लेना पड़ता है। वहाँ हमारे संवादों की कसौटी, हमारे सिनेरियों प्रदर्शन की कसौटी थे, चार आने के दर्जे से लेकर ३ रुपए १२ आने तक के; सिनेमा हॉल में बैठे हुए लोग। वहाँ कोई रामविलास शर्मा, कोई नंददुलारे वाजपेई या कोई हजारीप्रसाद द्विवेदी मेरी इज्जत नहीं बचा सकता। वहाँ तो मेरा मालिक दर्शक बैठा हुआ है। वह पास करता है तो मैं पास होता हूँ, वह फेल करता है तो मैं फेल होता हूँ।....फिल्म एक व्यवसाय है। वहाँ पहला महत्व पैसे को मिलता है और दूसरा नायक-नायिकाओं को। सही लेखक स्वाभिमानी होता है। वह सर्कस का शेर बनकर नहीं रह सकता है।"[49]

अपने फिल्मी जीवन की कामयाबी से लेकर साहित्यिक लेखन के बारे में नागरजी ने साफ

तौर पर कहा है- "वहाँ (मुंबई की फिल्मी दुनिया) में एक चीज फायदेमंद रही; फिल्म माध्यम की दृश्यात्मकता। सिनेमा में दृश्य सामने आ जाते हैं। एक्शन सामने होता है। सिनेमा की बाकी चीजें मुझे पसंद नहीं आयी। मैं उनके डिक्टेशन पर नहीं लिख सकता।" परन्तु अपने सृजनात्मक -लेखन के बारे में वह दो टूक कहते हैं-

"मै दृश्य देखता हूँ, डिक्टेशन देकर लिखवाना मुझे अच्छा लगता है। एक घंटे बोलते रहने के बाद सामने चित्र आने लगते हैं- कैरेक्टर्स; चरित्रों की झांकी-सी दौड़ने लगती है। बिम्बों के निकलने के अजीब अनुभव मेरे पास हैं। कभी-कभी आग की लपटों में, कभी-कभी अंधकार से चित्र उभरते हैं। मुझे कभी-कभी एक नाद सुनाई देता है। वह संगीत भी हो सकता है और बाबा की आवाज भी। वह नाद करके इमेज फेंकता है, ध्वनि के बाद पिक्चर्स आती है। इसीलिए मैं तस्वीर पूरी देता हूँ। सप्राण अंतर से भोगी हुई, देखी हुई।"[50]

अमृतलाल नागर के फिल्म-लेखन के अनुभव, उनके साहित्यिक लेखन में किस तरह से सहभागी और मददगार रहे हैं, उपर्युक्त-उद्धरण, नागरजी के शब्दों में होने से, इसका सबसे बड़ा प्रमाण है।

१.७ शौक़ एवं अन्य रुचियाँ

प्रत्येक व्यक्ति की पहचान और रुचियाँ अलग-अलग होती है, जिससे उनके व्यक्तित्व का निर्माण होता है। जैसे प्रेमचंद जी को बीड़ी का शौक था। शरतचंद को अफीम का नशा था। श्यामसुंदर दास, शुक्ल आदि शीर्षस्थ साहित्यकार जमकर हुक्का पीते थे। अमृतलाल नागर के व्यक्तित्व में एक बिल्कुल अलग-सी विशेषता दिखाई देती है। खुद के दुःख दर्द को भूलकर, दूसरों के घाव पर मरहम लगाने जैसा। साहित्य लिखने वाले नागरजी ने सतत साहित्य का सृजन किया है। उनके बहुत ही नजदीक से पहचानने वाले मित्र डॉ. रामविलास शर्मा जी लिखते है- "नागर जी ऊँचे गौरवर्णी, तेजस्वी मगर सरल व्यक्ति है। चेहरे में केवल आँखे हैं, एकदम घनी काली पुतलियाँ। इन आँखों में केवल एक ही भाव छलकता है, 'ढाई आखर प्रेम का भाव'। घृणा, उदासी आदि के भाव उनके होंठो पर है, आँखें तटस्थ रहती हैं। जब होंठो पर इन अस्थायी भावों की क्रीडा समाप्त हो जाती है, तब आँखें फिर मुखर हो उठती है।"[51] इस तरह आँखों से असीम स्नेह बरसाने वाले नागर जी बोल-चाल में बहुत ही सीधे-सादे थे। बहस करते समय रूठा दुश्मन भी हँस लेता था। उनके चाल-चलन, रहन-सहन में सुरुचि और सादगी थी। खद्दर का सफेद कुर्ता

-पायजामा और धोती ही उनको मन पसंद थी। रंग-बिरंगे भड़कीले कपड़े और सोना-चाँदी के आभूषण से उन्हें नफरत थी। नियमित पूजा-पाठ करने के बावजूद धार्मिक बाह्याडम्बरों और रूढ़ियों से वह नफरत करते थे।

अमृतलाल नागर हमेशा पान और भाँग का सेवन करते थे। खासकर वह बनारसी पान के शौकीन थे। उस समय शुक्ल जी, उग्रजी, रूद्रजी जैसे नामी लेखक भी भाँग और पान खाते थे पर नागरजी हमेशा पान का डिब्बा साथ रखते थे और-- भाँग खाए बिना रह नहीं सकते थे। उसके बिना लिखने का नागरजी का मूड ही नहीं होता था। यहाँ तक कि रूस की यात्रा के दौरान विजया का गोला (पाउडर) चूर्ण के रूप में उनके साथ था। भाँग का मजा लेते हुए वह इसके बारे में डॉ. रामविलास शर्मा से कहते हैं- "उसके (भाँग) बिना तो जाने का सवाल ही कहा उठता था रामविलास! हमने तो विष का चूरन बनाकर एक बोतल में भर लिया और जब कस्टम वालों ने रोका तो कह दिया- देसी दवाई है, सवेरे-साँझ पानी के साथ लेनी पड़े है...सब सालों को जवाब से तरकेट कर दिया.....और हम ये जा, के ओ जा।"[52]

अमृतलाल नागर कभी अकेले में भाँग नहीं पीते थे। किसी एक न एक को अपना साथी जरूर बनाते थे। उनकी रचनाओं में भाँग-प्रेमी पात्रों का बड़ा रोचक वर्णन मिलता है। 'अमृत और विष' के पुत्ती गुरु, 'खंजन नयन' के हरिहर चौबे तथा 'मानस का हंस' के मामाजी इसके उदाहरण है।

कन्हैयालाल नंदन ने अंतरंग बातचीत के दौरान नागरजी से पूछा- "बाबूजी, नशा कोई भी हो, आदमी को निकम्मा ही बनाता है।"

नागरजी का उत्तर था- "हम अपने नशे में शाम को निकम्मे हैं, लेकिन जब जरूरी होता है तो नशे में हम सिपाही होते हैं। मुहल्लें में पूछ लो, शहर वालों से पूछ लो-- हमारा नारा है- ४ बजे तक व्यस्त; ४ बजे के बाद मस्त।....हम शाम को सिर्फ जो गुनाह करते है, सो करते हैं।"[53] इस प्रकार नागर जी अपने शौक, नशे, व्यसन, गुण और दोष खुद स्वीकार करते हैं। कहीं पर भी किसी दोष को छिपाते नहीं, उसे सच्चे दिल से स्वीकारते हैं।

कन्हैयालाल नंदन ने कहा- "मैं उसे गुनाह नहीं कहना चाहता?"

स्पष्ट रुप से नागरजी कहते हैं, 'अच्छा'! और "हमें जो कुछ थोड़ी बहुत मस्ती में जीने का

आलम है, वह शाम को ही है। हम शाम को सिर्फ इसलिए करते हैं कि सारे संसार में हम कह सकें, तुम्हारी ऐसी की तैसी! ठेंगे पर है आप।... और सवेरे तो फिर काम करना है।"[54] इस तरह अपने शौक, नशेमंदी और व्यसन की स्पष्टता नागर जैसे बिरले व्यक्ति कर ही सकते हैं।

व्यस्त-मस्त नागरजी का स्वभाव उन्मुक्त था। पान और भाँग पर ऐसी बातें वही कर सकता है, जो मन से साफ-सुथरा हो। उनका हृदय निर्मल और शिशुवत था। सिर्फ मस्ती और यह फक्कड़पन ही अमृतलाल नागर का वास्तविक परिचय नहीं है। वो बड़े जागरूक, विचारवान, आत्मनिष्ठ, गहराई तक सोचने वाले तथा निरंतर चिरंतन के साधक कलाकार माने जाते हैं।

अमृतलाल नागर तीज-त्योहारों में खुलकर लोगों को भाँग पिलाते थे। एक बार पिकनिक पर भाँग ले गए थे तो वहाँ उन्होंने सबको भाँग पिलायी थी।

अमृतलाल नागर ने पद्मासचदेव को दिए एक विस्तृत इंटरव्यू में बहुत उन्मुक्तता से भाँग खिलाने-पिलाने का ब्यौरा दिया है- "तुमसे सच कहते हैं, भाँग अकेले कभी नही पी, होली पर तो कइयों को पिलाते हैं। अब इसमें खर्चा बड़ा होता है। हिन्दी मुझे रोटी खिला देती है। भाँग मैं खुद पी लेता हूँ। जनता पार्टी के राज में जब नशाबंदी शुरू हुई, तब हमने खरीदनी बंद कर दी। इधर-उधर से उखड़वा लेते रहे। हमने बाल्टियाँ भर-भर के भाँग पिलाई है यारों को; पिकनिक पर ले जाते थे। एक बार वहाँ सब माई डियरों ने भाँग पी तो मुश्किल से उन्हें ट्रेन तक घसीटकर लाए। काम पर जाए, तो हमारी भाँग खट्ट से उतर जाती है। हमने किसी को कैथा चटाया, किसी को नींबू।

"हमें बड़ी खुशी है कि हमने अपने सभी साथियों को भाँग चखा दी है, सिर्फ रामविलास शर्मा को नहीं पिला सका, इस बात का हमें बड़ा रंज है। पंडित हजारीप्रसाद द्विवेदी को भी उनके जन्मदिन पर भाँग पिला दी। बड़े शरीफ इंसान थे, मान गए। जरा सी पी, पर पी ली। भगवती चरण वर्मा का जन्मदिन मॉरीशस में पड़ा। वे वहाँ भारत की ओर से सरकारी मेहमान थे। में मॉरीशस का मेहमान था। बस पकड़ कर पीला दी। दिनकर जी,....एक बार उन्हें भी चखा दी थी। पंत जी पीने से आनाकानी करने लगे। मैने कहा- बंधु ऊपर जाऊँगा तो शंकर जी पूछेंगे तुमने दुनिया में क्या किया? पंत को भाँग तक नहीं पिलाई! वे बोले- नहीं भाई ये नही होगा। मैने कहा- बंधु ऊपर क्या मुँह दिखाऊँगा? तो कहने लगे- दे भाई, थोड़ी सी दे दे।

मास्कों में हम और राजेन्द्र सिंह बेदी साथ-साथ थे। मै ५ बजे सबेरे उठाकर पान पलटता था फिर बेदी को फोन करके पूछता था- क्यों भाई तुम्हारी पगड़ी बँधवाने आऊँ? इस काम में घंटों भी लग सकते है। बेदी हँसकर कहते- हो गया भाई, बाँध ली है। उन्हें भी हमने डटकर भाँग पिला दी। उसके फायदे भी बताए। भाँग के ज्यादा इस्तेमाल से लो ब्लड प्रेशर हो जाता है, एक डॉक्टर ने हमसे ऐसा कहा तो हमने कह दिया- भाई हम ठहरे लेखक, हमारा कोई कैरेक्टर नीचे आता है कोई ऊपर जाता है। जहाँ वो जाता है, हमे भी संग-संग रखता है। हमारा ब्लड प्रेशर हाई तो होगा ही उसे लो रखने के लिए ही भाँग पीते हैं इससे खून का दौरा रुकता है। सुकून ही सुकून हो जाता है।"[55]

एक दिन नागरजी, पद्मासचदेव और इशमत चुगताई बेदी साहब के यहाँ गए । रास्ते में नागरजी ने कहा-- "मुझे रामविलास शर्मा को भाँग न पिलाने का अब तक रंज है। आपा (इशमत चुगताई) कहने लगी-- अरे शर्माजी क्या खूबसूरत इंसान...! मोती के दाँत, उजला उजला, बेहद प्यारा लगता.....। अबके देखा तो इतने दुबले हो गए हैं और बुझ गए हैं, देखकर दु:ख हुआ। एकदम पिद्दी-से बुढ़ऊ हो गए हैं।

"भाँग न पीने का यही नुकसान है....'नागरजी झट से बोले आदमी जल्दी बूढ़ा जाता है।' आपा कहने लगी- जाओ-जाओ, भाँग तो तुम मुझे भी नही चढ़वा सके। लखनऊ में तुम्हारे घर मैने तीन गिलास पिए थे, मुझे तो नही चढ़ी तुम्हारी भाँग।

"नागरजी हँसकर बोले--- आपा, हमने उसमें भाँग डाली ही नहीं थी। वो तो निरा शरबत था। आपा कहने लगी--- जा, झूठ बोल रिया है! हमे तो नही चढ़ती भाँग, न ही हम बूढ़े हुए हैं। रामविलास शर्मा तुम्हारे साथ रूस नहीं गए थे? नागर जी बोले - नहीं, उनकी बीबी की तबियत बड़ी खराब थी।

"आपा कहने लगी-- अये-हये, ये कम्बक्त बीबियाँ बीमार क्यों हो जाती हैं? नागरजी कहने लगे कि मैं बड़ा शुक्रगुजार हूँ उन बीबियों का, जो अपने नामी शौहारों को दबा कर रखती हैं।

"ये बातें बेदी साहब के घर पर हुईं। बेदी साहब को कितने अरसे के बाद मैने खुलकर हँसते देखा। तीनों पुराने मित्र यौं बातें कर रहे थे, जैसे इतवार की छुट्टी के बाद तीन दोस्त सबेरे स्कूल में मिले हों।"[56]

ये प्रसंग अमृतलाल नागर की खुशदिली, हाजिर-जवाबी, बातचीत, बोली-बानी तथा व्यवहार में भी खुलेपन से हास्य रस की वर्षा करने के बहुत जीवन्त उदाहरण है।

अमृतलाल नागर पान और भाँग, जबरदस्ती या जिस तरह खिला-पिला पाते थे, उतने ही आवभगत के साथ खाना खिलाने के भी वह शौकीन थे। नागरजी और उनकी पत्नी अपने सगे-संबंधी, प्रियजनों का आतिथ्य सत्कार बहुत ही आदर से करते थे। उनमें भूख सहन की भी अद्भुत क्षमता थी, यही स्वानुभूत उदाहरण 'महाकाल' में मिलता है। गप्पों-किस्सों, चुटकुलों के भंडार नागरजी की रुचियों का संकेत उनके साहित्य में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से मिल जाता है। उनके कनिष्ठ पुत्र डॉ. शरद नागर के शब्दों में- "बाबूजी का ज्ञान प्रत्येक क्षेत्र में था। जैसे इतिहास, पुराण, विज्ञान, राजनीति, रंगमंच, चलचित्र आदि विषयों के वे मर्मज्ञ थे। विभिन्न वातावरण में रहना घूमना, भटकना, आम जनता तक पहुँच कर उनसे किस्से बटोरना, उनके लिए बहुत अहम काम था। कोई भी विषय हो, उसमें धाराप्रवाह बोलने की क्षमता उनमें थी।"[57] नागर जी को कथा साहित्य के अलावा रंगमंच-संगीत में भी रुचि थी। अच्छे विचारक, समाजशास्त्री के रूप में भी नागरजी का परिचय दिया जाता है। 'ये कोठेवालियाँ', 'नाच्यों बहुत गोपाल' जैसे उपन्यास इसके उदाहरण हैं। उनके शौक तथा रुचियाँ उनके ज्ञान की साक्षी हैं।

१.८ पुरस्कार एवं सम्मान

हिन्दी कथा साहित्य के अध्येयता लेखक; अमृतलाल नागर की प्रतिभा को मान देते हुए उनके कृतित्व को हिंदी जगत ने अनेक पुरस्कारों से समादृत किया है। वे निम्नांकित हैं-

१. बूँद और समुद्र पर नागरी प्रचारिणी सभा, काशी का विक्रम संवत् २९१५ से २०१८ तक का बटुक प्रसाद पुरस्कार एवं सुधारक पदक।

२. सुहाग के नुपुर पर उत्तर प्रदेश शासन का वर्ष १९६२-६३ का प्रेमचन्द पुरस्कार।

३. अमृता और विष पर वर्ष १९७० का सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार।

४. वर्ष १९६७ का अमृत और विष पर साहित्य अकादेमी पुरस्कार।

५. मानस का हंस पर मध्य प्रदेश शासन साहित्य परिषद का वर्ष १९७२ का अखिल भारतीय

वीरसिंह देव पुरस्कार।

६. मानस का हंस पर उत्तर प्रदेश शासन का वर्ष १९७३-७४ का राज्य साहित्यिक पुरस्कार।

७. हिंदी रंगमंच की विशिष्ट सेवा हेतु सन् १९७०-७१ का उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार।

८. उत्तर प्रदेशीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा साहित्य वारिधि उपाधि से विभूषित (सन् १९७२)

९. आकाशवाणी की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर विशेष सम्मान (सन् १७७)

१०. मानस का हंस पर श्री रामकृष्ण हरजीमल डालमिया पुरस्कार (सन् १९७८)

११. उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का विशिष्ट पुरस्कार (सन् १९७९-८०)

१२. राष्ट्रपति द्वारा पद्मभूषण उपाधि से सम्मानित (सन् १९८१)

१३. खंजन नयन पर भारतीय परिषद्, कलकत्ता (कोलकाता) का वर्ष १९८४ का नथमल भुवालका पुरस्कार।

१४. लखनऊ महोत्सव समिति द्वारा अवध गौरव सम्मान से अलंकृत (सन् १९९८६)

१५. फ़िल्म राइटर्स एसोसिएशन, बम्बई (मुम्बई) द्वारा सम्मान एवं मानद सदस्यता (सन् १९८७)

१६. राजभाषा परिषद्, बिहार सरकार द्वारा विशिष्ट साहित्यिक योगदान हेतु डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शिखर सम्मान (सन् १९८८)

१७. साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली द्वारा महत्तर सदस्यता (सन् १९८९)

१८. उत्तर प्रदेश उर्दू हिन्दी अवार्ड कमेटी द्वारा सम्मानित (सन् १९८९)

१९. वर्ष १९८५ का उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का सर्वोच्च भारत भारती सम्मान (२२ दिसंबर, १९८८ को प्रदत्त)

२०. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा साहित्य वाचस्पति उपाधि से विभूषित।

१.९ स्वर्गवास

यशस्वी साहित्यकार और लखनऊ को कथा साहित्य में अमर कर देने वाले अमृतलाल नागर को २३ फरवरी, सन् १९९० की संध्या महाशिवरात्रि के दिन इस संसार से परिनिर्वाण हो गया। अर्थात नागरजी स्वर्गस्थ हो गये। शिवरात्रि के दिन शिवधाम की यात्रा उन्होंने अपनी शिवभक्ति सिद्ध कर दी। इस संबंध में अमृतलाल नागर के छोटे पुत्र डॉ. शरद नागर की लिखी ये पंक्तियां अत्यंत प्रामाणिक अभिलेख के रूप में उल्लेखनीय है- "नागरजी....शुक्रवार, फाल्गुन, कृष्ण १३, महाशिवरात्रि विक्रमी संवत् २०४६, (२३ फरवरी १९९०) सायंकाल ५ बजकर ३ मिनट को लखनऊ के किंगजार्ज मेडिकल कॉलेज के इंटेंसिव केयर यूनिट में अन्तिम सांस लेकर वे शिवलीन हो गये।"[58]

निष्कर्षत: हम कह सकते हैं कि अमृतलाल नागर संवेदनशील रचनाकार अपने परिवेश से प्रेरणा लेते हुए विविध साहित्यिक रूप के माध्यम से हिंदी साहित्य का नित्य नया श्रृंगार करने में प्रवृत्त रहे।

१.१० आधार ग्रंथ

अमृतलाल नागर के उपन्यास

१. महाकाल (१९४७) : १९७० से 'भूख' शीर्षक से प्रकाशित

२. बूँद और समुद्र (१९५६)

३. शतरंज के मोहरे (१९५९)

४. सुहाग के नूपुर (१९६०)

५. अमृत और विष (१९६६)

६. सात घूँघट वाला मुखड़ा (१९६८)

७. एकदा नैमिषारण्डे (१९७२)

८. मानस का हंस (१९७३)

९. नाच्यों बहुत गोपाल (१९७८)

१०. खंजन नयन (१९८१)

११. बिखरे तिनके (१९८२)

१२. अग्निगर्भा (१९८३)

१३. करवट (१९८५)

१४. पीढ़ियाँ (१९९०)

अमृतलाल नागर के कहानी संग्रह

१. वाटिका (१९३५)

२. अवशेष (१९३८)

३. तुलाराम शास्त्री (१९४१)

४. आदमी नही! नहीं! (१९४७)

५. पाँचवाँ दस्ता (१९४८)

६. एक दिल हजार दास्ताँ (१९५५)

७. ऐटमबम (१९५६)

८. पीपल की परी (१९६३)

९. कालदंड की चोरी (१९६३)

१०. मेरी प्रिय कहानियाँ (१९७०)

११. पाँचवाँ दस्ता और सात अन्य कहानियाँ (१९७०)

१२. भारत पुत्र नौरंगीलाल (१९७२)

१३. सिकंदर हार गया (१९८४)

१४. एक दिल हजार अफ़साने (१९८६) : लगभग सभी कहानियों का संकलन

१.११ सन्दर्भ

१. बंधु कुशवर्ती से किए गए साक्षात्कार (२८-२९ सितंबर २०२०)

२. अमृतलाल नागर के उपन्यास एवं उनका परिवेश, लेखक- डॉ. श्रीप्रकाश पंड्या, पृ. १३

३. अमृतलाल नगर, लेखक- श्रीलाल शुक्ल, पृ. ०१

४. मैं और मेरा मन, लेखक- शरद नागर, पृ. २४,२६

५. मैं और मेरा मन, लेखक- शरद नागर, पृ. २४,२६,२७,२९

६. मैं और मेरा मन, लेखक- शरद नागर, पृ ३०

७. अमृतलाल नागर के उपन्यास एवं उनका परिवेश, लेखक - डॉ. श्रीप्रकाश पंड्या, पृ. १३

८. अमृतलाल नागर, लेखक- श्रीलाल शुक्ल, पृ. ०२

९. मैं और मेरा मन, लेखक- शरद नागर, पृ ३१

१०. अमृतलाल नागर के जीवनी परक उपन्यास- सुरेखा एम. झाडे, पृ. ३१८

११. अमृतलाल नागर : व्यक्तित्व एवं सिद्धांत - सुरेश बत्रा, पृ. ०६

१२. वही, पृ. ०३

१३. वही, पृ. २१

१४. अमृतलाल नागर के उपन्यास एवं उनका परिवेश, लेखक- डॉ. श्रीप्रकाश पंड्या, पृ. २३

१५. अमृतलाल नागर उपन्यास कला - प्रकाश चंद्र मिश्र, पृ. ४०-४१

१६. अमृतलाल नागर के जीवनी परक उपन्यास- सुरेखा एम. झाडे, पृ. ३२४

१७. अमृतलाल नागर के उपन्यास एवं उनक परिवेश, लेखक- डॉ श्रीप्रकाश पंड्या, पृ. २५

१८. अमृतलाल नागर एवं अमृत और विष- डॉ. हरिमोहन, पृ. २४

१९. वही, पृ. २४

२०. अमृतलाल नागर उपन्यास कला- प्रकाश चंद्र मिश्र, पृ. ४२

२१. अमृतलाल नागर : व्यक्तित्व एवं सिद्धांत- सुरेश बत्रा, पृ. १५

२२. अमृतलाल नागर के जीवनी परक उपन्यास- सुरेखा एम. झाडे, पृ. १५

२३. टुकड़े टुकड़े दास्तान, लेखक- अमृतलाल नागर, पृ. ५५

२४. वहीं, पृ. ६७

२५. वहीं, पृ. ६८

२६. वही, पृ. ६८

२७. अमृतलाल नागर : भारतीय उपन्यासकार, पृ. ११२

२८. अमृतलाल नागर रचनावली में स्वयं नागरजी द्वारा रचित 'निवेदनम', संपादक डॉ. शरद नागर, पृ. ०५,

२९. टुकड़े टुकड़े दास्तान,अमृतलाल नागर, संकलन एवं संपादन- शरद नागर, पृ. ५४

३०. रविन्द्र, रचना संचयन, साहित्य अकादेमी नई दिल्ली, पृष्ठ : xix

३१. सम्पूर्ण बाल रचनाएं : अमृतलाल नागर, संकलन एवं सम्पादन- शरद नागर, पृ. X

३२. (वही, पृ. xx, xxi)

३३. सम्पूर्ण बाल रचनाएँ : अमृतलाल नागर, संकलन एवं सम्पादन- शरद नागर, पृ. xvi

३४. टुकड़े टुकड़े दास्तान, अमृतलाल नागर, संकलन एवं संपादन- शरद नागर, पृ. १२८

३५. टुकड़े-टुकड़े दास्तान, अमृतलाल नागर, पृ. १२८

३६. उजास की धरोहर, संकलन, संपादन- डॉ. शरद नागर, पृ. १६१

३७. वही, पृ. १७०

३८. वही, पृ. १७२

३९. वही, पृ. १७५, १७६

४०. टुकड़े-टुकड़े दास्तान, अमृतलाल नागर, संकलन एवं संपादन- शरद नागर, पृ. ०७

४१. अमृतलाल नागर रचना संचयन, संपादक- शरद नागर, पृ. ३४

४२. अमृतलाल नागर के उपन्यासों का अनुशीलन- डॉ. रमेश संभाजी कुरे, पृ. ३४

४३. सीमांत प्रहरी- अमृतलाल नागर ग्रंथ, पृ. १२

४४. उपन्यासकार अमृतलाल नागर- बृजशकुमार मिश्र, पृ. २१-२२

४५. अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य- प्रकाश चंद्र मिश्र, पृ. ४०-४१

४६.. परिवेश, त्रैमासिक पत्रिका, अप्रैल-सितंबर २००२ पृ. १०,११,१२,१३

४७.. वही,

४८. परिवेश, त्रैमासिक पत्रिका, अप्रैल-सितंबर २००२, पृ.२६

४९.. वही, पृ. ४०,४१

५०. वही, पृ. ४०,४१

५१. 'नीर-क्षीर'- अमृतलाल नागर अंक, पृ. २१

५२. 'सारिका' १६-३१ अगस्त १९८५, पृ. ५७, पृ. ४०

५३. अमृतलाल नागर के उपन्यासों का अनुशीलन, लेखक, डॉ. शंभाजी कुरे, पृ. ३९-४९

५४. 'सारिका' १६-३१ अगस्त १९८५, पृ. ६९, पृ. ४०

५५. उजास की धरोहर, संकलन एवं सम्पादन- डॉक्टर शरद नागर, पृ. ४८

५६. वही, पृ. ४८-४९

५७. डॉ. शरद नागर दिनांक : २३ फरवरी १९९९ के वार्तालाप में- श्री गणेश पवार

५८. अमृतलाल नागर रचना संचयन, संपादक- शरद नागर, पृ. ३४